दिसम्बर 2019

दादावाणी

Retail Price ₹ 15

क्रोध-मान-माया-लोभ को उपराणां लेकर खुराक दे देते हैं, वह अजागृति है।
जिन्हें निकालना है, उन्हें खुराक देते हैं इसलिए वे टिकते हैं।
यदि तीन साल तक उन्हें खुराक नहीं दें तो वे खड़े ही नहीं रहेंगे।

वर्ष : 15 अंक : 2
अखंड क्रमांक : 170
दिसम्बर 2019
पृष्ठ - 36

Editor : Dimple Mehta
© 2019
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Offset
B-99, GIDC, Sector-25,
Gandhinagar – 382025.

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधरसिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : (079) 39830100
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)

15 साल
भारत : 1500 रुपये
यू.एस.ए. : 150 डॉलर
यू.के. : 120 पाउन्ड

वार्षिक
भारत : 150 रुपये
यू.एस.ए. : 15 डॉलर
यू.के. : 12 पाउन्ड

भारत में D.D./M.O. 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

कषायों के 'उपराणे' के सामने पुरुषार्थ

संपादकीय

संक्षेप में अक्रम विज्ञान का सार क्या है? ''मैं शुद्धात्मा ही हूँ', केवल ज्ञाता-द्रष्टा ही हूँ और मेरे खुद के जीवन में जो कुछ भी हो रहा है, वह पिछला भरा हुआ माल निकल रहा है, उसे 'देखते' रहना है।' अब भूल कहाँ-कहाँ पर हो जाती है?

(1) भरा हुआ माल है, ऐसा पता नहीं चले तो पूरा नुकसान।

(2) पता चल जाए, यानी कि 'जान ले' कि यह भरा हुआ माल है, लेकिन उसे अलग नहीं देखे तो पार्शियल (आंशिक) नुकसान। ऐसे में यदि उस भूल को चलने दे, उसका विरोध नहीं करे, तो फिर पता ही नहीं चलेगा कि कब उसे देखना और जानना चूक जाएगा।

(3) 'मैं शुद्धात्मा हूँ' के अलावा जो कुछ भी निकल रहा है, वह भरा हुआ माल है। उसे अलग जानना और देखना है, बस इतना ही नहीं, लेकिन साथ-साथ प्रज्ञा की तरफ से हर समय अपना स्ट्रोंग विरोध रहना ही चाहिए कि, 'यह गलत है, ऐसा नहीं होना चाहिए' तो हम जीत जाएँगे और भरा हुआ माल घर खाली करके चला जाएगा।

पहले तो, जब क्रोध होता था तब पता ही नहीं चलता था। इसलिए क्रोध करने के बाद पश्चाताप नहीं होता था। उसे अजागृति (बेहोशी) कहते हैं। यदि जागृति रहे तो क्रोध का पता चल जाता है। उसके बाद पश्चाताप शुरू होता है, प्रतिक्रमण होता है। अब, प्रतिक्रमण करते समय भी यदि कोई भूल निकाले तो क्रोधित हो जाता है और *उपराणा* लेकर प्रकृति का पक्ष ले लेता है। लेकिन जैसे-जैसे जुदापन की जागृति बढ़ती जाएगी वैसे-वैसे दोष होते ही उसे वहीं पर मोड़ पाओगे। उसके बाद आगे चलकर क्रोध होने से पहले ही उसे शांत कर पाओगे और उससे भी आगे की जागृति यह है कि क्रोध को उत्पन्न ही न होने दे।

ज्ञानी द्वारा स्वरूप ज्ञान की प्राप्ति होने के बाद खुद निष्पक्षपाती बन जाता है। जब तक निष्पक्षपाती नहीं बनता, तब तक ये तन्मयाकारपन की भूलें दिखाई नहीं देती लेकिन संयोगों के दबाव में आकर प्रकृति धोखा खा जाती है। दादाश्री कहते हैं कि वहाँ पर प्रकृति के प्रति वीतराग रहो, राग या द्वेष नहीं करना है, उसका *उपराणा* भी मत लो। प्राकृतिक भूलों में तन्मयाकार नहीं होना, वही सही पुरुषार्थ है।

प्रस्तुत अंक में कषाय के *उपराणे* के सामने पुरुषार्थ करने के लिए चाबियाँ मिलेंगी। अलग-अलग संयोगों में किस तरह से अलग देखना, तन्मयाकार नहीं होना, तप करना, *उपराणा* लेने से प्रकृति का रक्षण होगा और पाँच आज्ञा का पालन करने से आत्मा का रक्षण होगा। इसलिए महात्माओं से अब यही प्रार्थना है कि खुद के स्वरूप का *लक्ष* (जागृति) रखकर प्रकृति के विरोध में बैठो। जो वस्तु करोड़ों जन्मों में भी प्राप्त नहीं होती, वह सहज रूप से प्राप्त हो गई है। अब, कृपा से प्राप्त उस 'आत्मपद' का रक्षण करेंगे।

- **जय सच्चिदानंद**

पाठकों से...

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

कषायों के 'उपराणे' के सामने पुरुषार्थ

खुद की प्रतिष्ठा से उत्पन्न होते हैं कषाय

प्रश्नकर्ता : दादा, इन कषायों का *उपराणा* (रक्षण) किस तरह लिया जाता है? वह क्या समझने से बंद होगा?

दादाश्री : क्रोधित होकर बच्चों को मारता है, उसके बाद अगर बीवी कहे कि 'बेचारे बच्चे को इतना क्यों मारा?' तब कहता है, 'तू नहीं समझेगी, यह मारने जैसा ही है।' इससे क्रोध समझ जाता है कि, 'अरे वाह, मुझे खुराक दी! भूल है, ऐसा नहीं समझता और बल्कि ऐसा अभिप्राय देता है कि मारने जैसा है कि इस तरह यह मुझे खुराक दे रहा है।' इसे कहते हैं खुराक देना। यदि क्रोध को एन्करेज (प्रोत्साहित) कर, उसे अच्छा माने, तो उसे खुराक देना कहा जाएगा। क्रोध के लिए अगर ऐसा समझें कि 'क्रोध गलत है' तो ऐसा कहा जाएगा कि उसे खुराक नहीं दी। क्रोध का *उपराणा* लिया, उसका पक्ष लिया, तो उसे खुराक मिल गई। खुराक की वजह से ही तो वह जी रहा है। लोग तो उसका पक्ष लेते हैं न?

जब तक ये क्रोध-मान-माया-लोभ की कमज़ोरियाँ हैं, तो मुसीबतों का सामना कैसे हो सकेगा? क्रोध-मान-माया-लोभ में संसार के सभी विषय आ ही जाते हैं। क्रोध और माया, वे तो रक्षक हैं। मूलत: लोभ में से ही उत्पन्न हुए हैं। मानी को मान का लोभ होता है। ऊपर से कपट उसका रक्षण करता है।

क्रोध-मान-माया-लोभ, ये चारों किससे उत्पन्न होते हैं? खुद की ही प्रतिष्ठा से।

मान और लोभ के रक्षक, क्रोध और कपट

ये जो क्रोध-मान-माया-लोभ हैं, इनमें से क्रोध और माया तो मान और लोभ के रक्षक हैं। वास्तव में तो लोभ का रक्षक माया है और मान का रक्षक क्रोध है। फिर भी मान के लिए माया का थोड़ा-बहुत उपयोग होता है। कपट करके भी मान प्राप्त कर लेते हैं।

यदि आपने अभी किसी को गुस्से में एक-दो धौल मार दी, उसके बाद आपको मन में खराब लगता है कि यह गलत हो गया। फिर अगर कोई आकर पूछे, 'अरे चंदूभाई, इस तरह धौल लगानी चाहिए क्या? यों रास्ते पर?' तब आप क्या कहोगे? 'उसे मारने जैसा ही है, आपको क्या पता?' अब, आप जानते हो कि यह गलत हुआ है, फिर भी उन भाई के सामने ऐसा क्यों बोलते हो?

प्रश्नकर्ता : खुद का मान दिखाने के लिए?

दादाश्री : हाँ, उससे फिर गुनाह लगता है। आपको सबकुछ स्वीकार (एक्सेप्ट) है, एफिडेविट (शपथ पत्र) किया कि यह गलत हो रहा है। तो अब उसे कह दो न कि 'भाई, मुझसे गलत हुआ, खराब हो गया।' लेकिन अब, वहाँ पर यदि बचाव करेगा तो फिर क्या होगा? यह सब पुरुषार्थ है! इसी प्रकार के पुरुषार्थ की वजह से संसार लटका हुआ है! करते हैं या नहीं, ऐसा पुरुषार्थ?

प्रश्नकर्ता : ऐसा ही करते हैं उल्टा ही।

दादाश्री : वह उल्टा पुरुषार्थ है।

लोभ की गांठ का करते हैं रक्षण

एक व्यक्ति तो इतना लोभी था कि उसने हमारे यहाँ आना ही छोड़ दिया। और जब दूसरे लोग मंदिर के लिए पैसे देने लगे, तब वह कहने लगा कि, 'दादा तो पैसे लेते नहीं हैं फिर आप क्यों उन्हें उल्टे रास्ते पर ले जा रहे हो?' मैं समझ गया कि वह व्यक्ति बहुत लोभी है। चार आने भी नहीं छूटते। आपको उसके घर चाय पीने की इच्छा भी नहीं करनी चाहिए। यदि पिलाए तो ठीक है। उस व्यक्ति का दोष नहीं है। उस पर द्वेष करने जैसा नहीं है। उस बेचारे को वह गांठ परेशान कर रही है। उस व्यक्ति का दोष नहीं है। लोभी चारों तरफ से उसका रक्षण ही करता रहता है। जो दिन भर विचारों से रक्षण करता ही रहता है, उसे लोभी कहते हैं। किसका रक्षण करता रहता है? अपने आत्मा का नहीं, जन्म से लोभ का ही रक्षण करता रहता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक, अंतिम स्टेशन तक। मृत्यु के समय भी लोभ की बात करता है।

लोभ की गांठ तोड़ने का उपाय

अहंकारी प्रकृति हो तो उसे जब देखो तब अहंकार में ही रहती है और लोभी प्रकृति हो तो जन्म से अंतिम स्टेशन पर पहुँचने तक भी उसमें लोभ रहता है। अंतिम स्टेशन पर जाने के लिए लकड़ियाँ लाकर रखी हों तो वह कहता है कि 'भाई, वो वाली जो लकड़ियाँ हैं न, मेरे लिए उतने का ही उपयोग करना। बाकी की वे सब अपने घर के लिए हैं।' ऐसा बिल्कुल साफ-साफ कहकर मरता है क्योंकि उसे लोभ है न! अर्थात् वह उसका प्रकृति स्वभाव है।

प्रश्नकर्ता : कम हो सकती है?

दादाश्री : अगर कम हो जाए तो भी उसे कम करने वाले आप नहीं हो। वह उसके पुरुषार्थ से नहीं होती, वह साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स के आधार पर कम होती है या फिर बढ़ भी जाए एविडेन्स के आधार पर वह बढ़ भी सकती है या कम भी हो सकती है। यह प्रकृति अपनी सत्ता में नहीं है इसलिए आपको तो यही देखना है कि 'ओहोहो! इतनी लोभी प्रकृति है तो पूरी ज़िंदगी यह प्रकृति छोड़ेगी नहीं।' अत: हमें क्या भावना करनी चाहिए कि 'जितना हो सके उतना, मेरी जो कुछ भी जायदाद है उसका उपयोग जगत् कल्याण के लिए हो।' ऐसी भावना की जाए तो इस भावना के फल स्वरूप प्रकृति वापस, अगले जन्म में आपका मन बड़ा रहेगा। जबकि यह तो बिगड़ गई है। यह जन्म तो गया लेकिन अब नया तो सुधारो भाई। अत: इस प्रकृति को देखकर आपको नई सुधारनी है। यह आपको सावधान करती है कि अगर पसंद नहीं हो तो नया सुधारो और अगर पसंद हो तो रहने दो। अत: सिर्फ भावना ही करनी है और कुछ नहीं करना है।

जुदा रहकर देखने वाले को है लोभ

लोभ का विरोधी शब्द है, 'संतोष।' पूर्व जन्म में जिसने थोड़ा-बहुत ज्ञान समझा होगा, आत्मज्ञान नहीं लेकिन संसारी ज्ञान समझा होगा, तो उसमें संतोष होता है और जब तक वह नहीं समझा होगा, तब तक उसे लोभ रहता है।

अनंत जन्मों तक जिसने खुद भोगा हुआ हो तो उसे संतोष रहता है कि अब कुछ नहीं चाहिए और जिसने नहीं भोगा होता उसे कई तरह के लोभ रहते हैं। फिर, 'यह भोग लूँ, वह भोग लूँ और फलाना भोग लूँ', ऐसा रहा करता है।

अपना विज्ञान तो सबकुछ समझा देता है कि 'यह लोभ आया, फलाना आया' क्योंकि जुदा रहकर देखने वाले हैं न! चंदूभाई का लोभ नहीं छूटता, लेकिन हमें समझ में आ जाता है कि

चंदूभाई का लोभ नहीं छूट रहा है। तब फिर हम उसे टोक देते हैं! कैसे भी समझाकर पाँच-पच्चीस हज़ार रूपये दिलवा देते हैं न किसी जगह पर!

माया और कपट करते हैं रक्षण

अब कपट क्या खाता होगा? रोज़ कालाबाज़ारी करता हो पर कपट की बात निकले तब वह बोल उठता है कि हम ऐसी कालाबाज़ारी नहीं करते। इस तरह वह ऊपर से साहूकारी दिखाता है, वही कपट की खुराक।

प्रश्नकर्ता : कपट क्या है?

दादाश्री : चीज़ को ढकने की कोशिश करता है। यह सब कपट ही कहलाएगा न! अंदर सारा कपट ने ही उल्टा करवाया है न। अहंकार और कपट दोनों एक हो जाएँ, तब होता है न ऐसा! उल्टे रास्ते कौन ले जाता है? क्रोध-मान-माया-लोभ। वे चारों ही जब इकट्ठे हो जाते हैं तो उल्टे रास्ते पर ले जाते हैं। मूलत: यह सारा अहंकार का है और अंदर लोभ किस चीज़ का है? अंदर उसे स्वाद आता है।

जागृति ज्ञान में परिणामित हो, उससे पहले तो कपट का एक अंश तक नहीं रहना चाहिए। किसी भी प्रकार के कपट का अंश नहीं रहना चाहिए, विषय का अंश नहीं रहना चाहिए। यानी विषय का विचार तक नहीं आना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : 'माया यानी कपट', अर्थात् कपट में ही विषय है?

दादाश्री : नहीं, कपट में विषय है, ऐसा नहीं है, वह तो विषय भोगने के लिए कपट के हथियार का उपयोग करता है! विषय को अधिक भोगने की लालच, वही लोभ है और वह लोभ करते समय कोई अड़चन आए वहाँ कपट कर लेता है। लोभ का रक्षक है कपट और मान का रक्षक है क्रोध। अत: क्रोध, मान का चौकीदार है और वह कपट लोभ का चौकीदार है। मुख्य तो दो ही हैं। लेकिन दोनों चौकीदार हैं!

मान में कपट नहीं है। मान में कपट होता तो जागृति ही उत्पन्न नहीं होती। कपट यानी पर्दा! जिस पर पर्दा है, वह दिखाई नहीं देता, वहाँ वह अंध रहता है।

लोग क्रोध को मारते हैं न? कोई लोभ को मार-मारकर कम करता है, तब माया क्या कहती है? माया कहती है कि, "मेरे छ: पुत्र हैं, क्रोध-मान-माया-लोभ, राग और द्वेष। ये मेरे छ: बेटे और मैं सातवीं, हमें कोई निर्वंश नहीं कर सका है। हाँ, सिर्फ एक 'ज्ञानी पुरुष' ही हमें निर्वंश कर सकते हैं। बाकी, कोई हमें निर्वंश नहीं कर सकता। तू चाहे जितना मेरे क्रोध को मारेगा, तू लोभ को मारेगा, लेकिन जब तक मेरा मान नाम का बेटा जीवित है, तब तक सब जीवित हो जाएँगे।"

यों खा जाते हैं कषाय

क्रोध-मान-माया-लोभ की शक्तियाँ अंदर बैठी हुई रहती हैं। वे कहती हैं, 'कब दादा को छोड़े और इसे पकड़ लूँ।' वे किसी भी रास्ते से आड़ा-टेढ़ा दिखाकर भी इसे छुड़वाने को तैयार रहते हैं क्योंकि जब तक ये खड़े हैं, जब तक साबुत हैं, तब तक निर्वंश नहीं होंगे। तब तक बोलने जैसा नहीं है। वह वाणी तो हवा-पानी हो जाएगी (भाप बनकर उड़ जाएगी)। इसलिए बोलना नहीं है।

जिन दोषों के उदय में आने से उनमें मिठास लगे, तो ऐसा कहा जाएगा कि उसे खुराक मिल गई। क्रोध-मान-माया-लोभ को खुराक मिल जाए। फिर तो वे उस तरफ ज़ोरदार शक्ति का उपयोग करते हैं! यह तो, खुराक नहीं दी थी, इसलिए वे कुछ दिन भूखे रहे थे न, इसलिए निर्बल हो गए थे। लेकिन लोग अंदर थोड़ा-थोड़ा देते हैं। बहुत दयालु हैं न, बहुत *लागणी* (भावुकता वाला प्रेम) वाले हैं न! कहेंगे, 'लो! दाल-चावल और

यह थोड़ा लो। अरे, दादा का प्रसाद तो लो।' यानी थोड़ी-थोड़ी खुराक देते हैं। यदि बिल्कुल भूखा रखा जाए तो तीन साल से ज़्यादा नहीं टिक सकेंगे। वे चले गए तो सर्वस्व, पूरा साम्राज्य अपने हाथ में आ जाएगा।

क्या ऐसा पता चलता है कि वे कषाय खा जाते हैं? पता चलता है कि यह कौन खा गया? कषाय ऐसे खा जाते हैं। अगर महीने में दो बार ही खाना मिले, तो वापस जैसे थे वैसे के वैसे मज़बूत हो जाते हैं।

हमारे पास से तो कभी भी खाकर नहीं गए। उसके बाद ही तो चले गए न! फिर से हमने तय किया हो कि 'इन्हें नहीं खिलाना है' तो नहीं खाते। जागृति रहनी चाहिए।

अभी तक वे सारे कषाय बैठे हुए हैं, चले नहीं गए। मैंने उन्हें मारा भी नहीं है। मैं कोई हिंसक नहीं हूँ। यानी कि वे चले नहीं गए हैं। उसी प्रकार, ऐसा भी नहीं है कि हमें उन्हें भूखा मारना है। वे 'ज्ञानी पुरुष' के ताप से दूर चले जाते हैं, उसमें हम क्या करें? उसके बाद हमें जान-बूझकर नहीं बुलाना है। आपके पास कभी खाने के लिए आते हैं?

प्रश्नकर्ता : आते हैं दादा।

दादाश्री : आज कच्चा खिलाओगे तो कल पक्का खाकर जाएँगे इसलिए उनके साथ खाने-खिलाने का व्यवहार ही नहीं रखना है। भोजन करवाने का व्यवहार ही नहीं। बाकी तो सभी लोग खिलाते हैं, क्रोध को भोजन करवाते हैं, मान को भोजन करवाते हैं।

प्रश्नकर्ता : ये सारी खुराक कषाय ही खा जाते हैं, तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : वे तो खा जाएँगे। फिर भी 'दादाजी' की छत्रछाया है, कृपा से सब साफ (क्लियर) हो जाएगा, ऐसा है। खुद ही अगर इस सत्संग में से इधर-उधर हो गए तो तुरंत ही चिपट जाएगा सब। आपको तो 'दादाजी' का आसरा नहीं छोड़ना है। चरण नहीं छोड़ने हैं!

ये क्रोध-मान-माया-लोभ वगैरह तो सब दबे हुए हैं। अभी अगर ज़रा दबाव आए न तो वे भभक उठेंगे। इसलिए अगर पूर्ण करना हो तो यह रास्ता है कि सभी क्षय हो जाने चाहिए। उपशम और क्षायक, इन दो शब्दों को समझ लेना।

ये सारी वंशावली कम हो जाएगी तब काम होगा। इस वंशावली को कम करना एक विकट काम है। अनंत जन्मों का माल है सारा! ये सभी गुण उपशम हो चुके हैं। अब इनमें से कुछ फूट निकलते हैं और कुछ अगले जन्म में फूटेंगे, उसमें हर्ज नहीं है। अगला जन्म तो समझो कि पद्धतिपूर्वक का जन्म है, लेकिन यहाँ फूट निकलेगा तो परेशानी हो जाएगी। यहाँ पर तो फिर, यहाँ से हिलने ही नहीं देंगे!

पोषण नहीं मिलने से विलय होंगी गांठें

ये गांठें, वे तो आवरण हैं! जब तक ये गांठें हैं तब तक आत्मा का स्वाद नहीं आने देंगी। इस ज्ञान के बाद अब गांठें धीरे-धीरे विलय होती जाएँगी, बढ़ेंगी नहीं अब। फिर भी कौन सी गांठें परेशान करती है, कौन सी दुःख देती हैं, उतनी ही देखनी हैं। सभी गांठें नहीं देखनी हैं। वह तो, जैसे इस मार्केट में सभी सब्ज़ियाँ पड़ी रहती हैं, लेकिन उनमें से कौन सी सब्ज़ी पर अपनी दृष्टि जाती रहती है, उसी का झंझट है, अंदर वह गांठ बड़ी है!

तेरी कौन-कौन सी गांठ बड़ी है?

प्रश्नकर्ता : विषय की एक बड़ी है, फिर लोभ की आती है, फिर मान-अपमान की आती है। फिर कपट में तो, खुद का बचाव, स्व रक्षण करने के लिए कपट खड़ा होता है।

दादाश्री : अन्य किसी के लिए कपट नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : अपमान का भय हो या खुद की गलती हो तब।

दादाश्री : हाँ, लेकिन इसके अलावा अन्य किसी चीज़ के लिए कपट नहीं है न? ये सभी गांठें कपट वाली ही होती हैं, कपट करे तभी इनका फल मिलता है!

गांठ बड़ी रही तो बहुत विचार आएँगे और चोरी करके भी आएगा। फिर कहेगा, 'मैंने कैसी चालाकी से चोरी की!' ऐसा कहने पर चोरी की गांठ को पुष्टि मिलती है। पोषण मिले तो नये बीज पड़ते हैं और चोरी की गांठ और बड़ी होती जाती है। अब एक दूसरा चोर है, वह चोरी करता है पर साथ-साथ वह भीतर पछताता है कि 'यह चोरी होती है, वह बहुत गलत हो रहा है पर करूँ भी तो क्या? पेट भरने के लिए करना पड़ता है।' वह दिल से पश्चाताप करता रहेगा तो चोरी की गांठ को पोषण नहीं मिलेगा। अगले जन्म के लिए, 'चोरी नहीं करनी चाहिए', ऐसे बीज बोता है। अतः वह दूसरे जन्म में चोरी नहीं करेगा।

जैसे-जैसे सत्संग होता जाएगा वैसे वैसे खाली होता जाएगा। अब, खाली होने लगा है। पहले उन गांठों को पोषण मिल रहा था और वे बढ़ती जा रही थीं। एक तरफ फूटती भी थीं और दूसरी तरफ बढ़ती भी थीं। *पूरण* (चार्ज होना) भी हो रहा था और *गलन* (डिस्चार्ज होना) भी हो रहा था। अब, सिर्फ *गलन* ही हो रहा है। अब आपने निश्चय किया कि 'भाई, अब (अपने खेत की) बाड़ में एक भी गांठ नहीं रहने देनी है।' तो ज्ञानी पुरुष कहते हैं कि भाई, खोदकर निकाल दो। जहाँ पर बेल दिखाई देती है, वहाँ पर गांठ है। और जहाँ कुंदरू की बेल दिखाई देती है वहाँ कुंदरू है और जहाँ परवल की बेल दिखाई देती है, वहाँ परवल है। उसे खोदकर निकाल दो और उसके बाद आप मुझे बताने आओ कि 'साहब, मैंने सभी गांठे निकाल दी, अब मेरे घर पर बेल नहीं उगेगी न?' तब हम कहेंगे, 'नहीं, अगले साल देखना! अंदर थोड़ी बहुत गांठ रह गई होगी तो तीन साल तक ध्यान रखना होगा। बस, उसके बाद खत्म हो जाएँगी फिर निर्ग्रंथ बन जाओगे!'

अजागृति से दे देते हैं खुराक

इन क्रोध-मान-माया और लोभ को तीन साल तक यदि खुराक नहीं मिले तो फिर वे अपने आप भाग जाएँगे। हमें कहना ही नहीं पड़ेगा क्योंकि हर एक चीज़ अपनी अपनी खुराक से जीवित रहती है। संसार के लोग क्या करते हैं? हर रोज़ इन क्रोध-मान-माया और लोभ को खुराक देते रहते हैं। रोज़ भोजन करवाते हैं और फिर ये तगड़े होकर घूमते रहते हैं।

क्रोध-मान-माया-लोभ सभी अजागृति है। कोई मुझे पूछे कि 'वह अजागृति किस प्रकार से? वह समझाइए।' तब हम उससे कहें कि, 'आपको क्रोध-मान-माया-लोभ निकालने हैं या नहीं?' तब वह कहता है कि, 'हाँ, निकालने हैं।' 'निकालने हैं' कहे तब तक वह जागृत है। परंतु क्रोध-मान-माया-लोभ को खुराक दे देता है, वह अजागृति है। जिन्हें निकालने हैं उन्हें खुराक देते हैं, इसलिए वे टिकते हैं। यदि तीन वर्ष तक उन्हें खुराक नहीं दें तो वे खड़े ही नहीं रहें।

खुद का दोष दिखाई दे तब समझना कि जागृत हुआ है, नहीं तो नींद में ही चलते हैं सभी। दोष खत्म हुए या नहीं हुए, उसकी बहुत चिंता करने जैसी नहीं है, पर जागृति की मुख्य ज़रूरत है। जागृति होने के बाद नये दोष खड़े नहीं होते और पुराने दोष हों तो वे निकलते रहते हैं। आप उन दोषों को देखो कि किस-किस तरह के दोष होते हैं।

क्रोध आना, लोभ होना, वह अजागृति है।

जितनी-जितनी अजागृति कम हुई, जागृत हो, वैसे-वैसे क्रोध-मान-माया-लोभ कम होते जाते हैं। अजागृत अर्थात् क्रोध करने के बाद भी नहीं पछताता। क्रोध करके जो पछताता है, उसे थोड़ी जागृति है, पर वह अजागृत अधिक है। क्रोध करने के बाद पता चल जाए और फिर उसे शुद्ध कर डाले वह कुछ जागृति कहलाती है। पर क्रोध करने के बाद पता ही नहीं चलता, वह अजागृत दशा! जो जागृति, क्रोध नाम की कमज़ोरी उत्पन्न करे उसे जागृति कहेंगे ही कैसे? कहीं भी क्रोध नहीं हो, वैसा होना चाहिए। जो जागृति क्रोध का शमन करे, वह जागृति अच्छी। सही जागृति तो, क्रोध होने वाला हो, उसे मोड़ ले, वह। लोगों को जागृति होती ही नहीं।

पुद्गल का पक्ष ले लेते हैं, वह अजागृति है

प्रश्नकर्ता : अजागृति की वजह से फाइल का *निकाल* नहीं हो पाता और फाइल पर क्रोध आ जाता है।

दादाश्री : क्रोध तो हो सकता है वह अंदर भरा हुआ माल है। आपको जानना है कि चंदूभाई को क्रोध आ रहा है। वह तो अंदर भरा हुआ है न! आपको चंदूभाई से पूछना है कि 'भाई, ऐसा क्यों करते हो?' लेकिन यह भरा हुआ माल निकल जाए तो अच्छा। यदि भरा हुआ माल खाली हो जाएगा तो हल आ जाएगा।

क्रोध-मान-माया-लोभ *पुद्गल* (जो पुरण और गलन होता है) के गुण हैं, आत्मा में ऐसे गुण नहीं हैं। अत: जो अपने गुण नहीं हैं, उन्हें हम अपने सिर पर क्यों लें? जो बढ़ते-घटते हैं न, वे सभी *पुद्गल* के गुण हैं और जो बढ़ता नहीं, घटता नहीं, मोटा नहीं है, पतले नहीं हैं, ठिगना नहीं, लंबा नहीं है, वज़नदार नहीं है, हल्का नहीं है, वे सब आत्मा के गुण हैं। बाकी का सब *पुद्गल* है।

प्रश्नकर्ता : दादा ने भेद ज्ञान दिया, भिन्न बनाया। मैं अलग, दरअसल अलग हूँ, लेकिन वह चंदूभाई तो रहेगा ही न? वह तो रहेगा ही न, जितने साल बाकी रहे होंगे उतने साल तक रहेगा न? चंदूभाई *पुद्गल* तो रहेगा ही न?

दादाश्री : रहेगा न! वह *पुद्गल* तो रहेगा। *पुद्गल* आपने अर्पण कर दिया है। अब यह जो *पुद्गल* है, वह व्यवस्थित के अधीन है। वह अपने व्यवस्थित के अधीन चलता रहेगा। आपको देखते रहना है। 'यह *पुद्गल* क्या कर रहा है', उसे देखते रहना है। इतना आपका पुरुषार्थ।

प्रश्नकर्ता : देखते रहना है और कभी *पुद्गल* को सावधान भी करना है या नहीं?

दादाश्री : हाँ, सावधान करना है! लेकिन यदि ग़फ़लत में पड़ जाए तो सावधान करना।

प्रश्नकर्ता : अरे, चलते-फिरते ग़फ़लत तो करता ही है न!

दादाश्री : नहीं, यह सब तो उदयकर्म करवाते हैं। लेकिन आप खुली आँखों से चलो और सावधानीपूर्वक चलो, बस इतना ही। उसका दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। वर्ना उसकी देखने की जागृति मंद हो जाएगी। यदि 'देखे', तब तो उसे कुछ नहीं करना है। जो आज्ञा में रहता है, वह 'देखता' ही है चंदूभाई को, तो उसे कोई बात करने की ज़रूरत ही नहीं है। लेकिन जब वह नहीं देखता है, तब सावधान करना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : जागृति की जो बात की न, जागृति में रहने की और सावधान रहने की, उसका हम विवरण कर रहे हैं।

दादाश्री : हाँ, ठीक है। जिससे ज्ञाता-द्रष्टा रहा जा सके, उसे इस बात की ज़रूरत नहीं है। और जिसे जागृति नहीं रहती है, उसे हम कहेंगे कि 'खुली आँखों से चलना, ग़ाफ़िल मत हो

जाना'। वर्ना व्यवस्थित तो आपको चलाएगा ही, लेकिन वह ग़फ़लत वाला नहीं होना चाहिए। और जो ज्ञाता-द्रष्टा रहता है वह तो ग़ाफ़िल भी नहीं है। कुछ भी नहीं रहा। वह आपके हिसाब में जाएगा। आप उसके ज्ञाता-द्रष्टा हो, कि चंदूभाई क्या कर रहे हैं।

प्रश्नकर्ता : यानी दादा, किसी भी बात में चंदूभाई को देखने के बजाय अगर मैं ही चंदूभाई बन जाऊँ तो क्या ग़ाफ़िल हो गया कहा जाऊँगा?

दादाश्री : हाँ, उसे ग़ाफ़िल होना कहा जाएगा। किसी भी बात में आप यों चंदूभाई को देखने के बजाय आप चंदूभाई बन जाओ तो वह ग़फ़लत है। तब हम क्या कहते हैं कि वहाँ पर आँखें खोलकर चलो।

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन कभी ऐसा होने के बाद फिर आँखें खुल जाती हैं। दादा सावधान कर देते हैं कि, 'यह हो गया, अब इसे देखो।'

दादाश्री : हाँ। वहाँ पर हमने कहा है कि आँखें खोलकर खड़े रहो। हमें वह जागृति रखनी है। ऐसा हो जाता है न? दादा को कहने नहीं आना पड़ता न! यह सारा काम विज्ञान कर रहा है। आपको किसी तरह की परेशानी नहीं है। सहज रूप से काम हो रहा है। सावधान भी करता है। लोग कहते हैं कि आत्मा का अनुभव नहीं होता। अरे भाई, क्या अंदर सावधान नहीं करता पूरे दिन? हाँ। तो भाई, वही आत्मा है। और कौन आएगा? कोई परदेशी है, जो अंदर घुस गया है?

'हम' स्वरूप का ज्ञान दें, उसके बाद फिर क्रोध-मान-माया-लोभ रहते ही नहीं हैं। लेकिन आपको यहाँ पर उन्हें पहचान लेना पड़ेगा! क्योंकि जो निर्मल आत्मा आपको दिया है, वह कभी भी तन्मयाकार नहीं होता है। फिर भी खुद को समझ नहीं आने से खुद का व्यक्तित्व छोड़ने से, थोड़ी दख़ल होने से बखेड़ा खड़ा हो जाता है। 'जगह' छोड़ने से ही बखेड़ा होता है। ''खुद का स्थान नहीं छोड़ना चाहिए। 'खुद का स्थान' छोड़ने से कितना नुकसान है? कि 'खुद का सुख'' बंद हो जाता है और बखेड़े जैसा लगता है। लेकिन 'हमारा' दिया हुआ आत्मा, ज़रा सा भी इधर-उधर नहीं होता, वह तो वैसे का वैसा ही रहता है, प्रतीति के रूप में!

पुरुष बनकर, पुरुषार्थ करो

प्रश्नकर्ता : यानी जब 'व्यवस्थित' के अधीन तन्मयाकार होता है तब उसे तन्मयाकार नहीं होने देना चाहिए। अब यह जुदा रखना.....

दादाश्री : वह जो प्रक्रिया है वही पुरुषार्थ है।

प्रश्नकर्ता : यह जुदा रखना, वह कौन रखता है?

दादाश्री : वह अपने को रखना है। किसे रखना है यानी?! जो रख रहा होगा, वह रखेगा लेकिन हमें निश्चित करना है कि हमें रखना है। उससे, आप यदि प्रज्ञा होंगे तो इस तरफ का करेंगे और अज्ञा होंगे तो उस तरफ का करेंगे, लेकिन वह आपको निश्चित करना है। इस तरफ हुआ तो जानना कि प्रज्ञा ने किया और उस तरफ का हुआ तो अज्ञा ने किया। आपको तो निश्चित ही करना है कि 'मुझे पुरुषार्थ ही करना है। मैं पुरुष (आत्मा) बना। दादा ने मुझे पुरुष (आत्मा) बनाया है। पुरुष (आत्मा) और प्रकृति दोनों जुदा कर दिए हैं। मैं पुरुष (आत्मा) बना हूँ। इसलिए पुरुषार्थ करना है।' ऐसा निश्चित करना।

यह तो पूरे दिन प्रकृति में चला जाता है काफी कुछ तो, ऐसे के ऐसे ही बह जाता है पानी!

समझनी हैं, देखने-जानने की सूक्ष्म बातें

प्रश्नकर्ता : तो फिर अहंकार खत्म करने

की माथापच्ची करने की ज़रूरत नहीं है। अपने आप ही क्रम से उदय में आएगा और उसे हमें देखते रहना है।

दादाश्री : नहीं। आपको पुरुषार्थ करना बाकी रहा। 'कुछ करने जैसा नहीं है' ऐसा नहीं है। वास्तविक पुरुषार्थ ही अब करना है। 'अहंकार नुकसानदेह है', तभी से सब काम सरल हो जाएगा। वह बचाव करने जैसी चीज़ नहीं है। वह अहंकार ऐसा है कि खुद ही बचाव कर लेगा। हमें अहंकार का बचाव करने की ज़रूरत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : बावा को बावा का अस्तित्व खत्म करने के लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : अब अस्तित्व उत्पन्न हो सके, ऐसा है ही नहीं। यदि बावा के पक्ष में नहीं बैठेंगे तो बावा के बच्चे नहीं होंगे। जब कोई 'तुझे' गाली दे, उस क्षण यदि तू खुद का रक्षण न करे तब वह सब फिर से होगा ही नहीं।

मंगलदास का रक्षण करने से हम बावा ही रहेंगे और बावा का रक्षण करेंगे तो हम वापस मंगलदास ही बनेंगे। उसका जो हिसाब है वह उसे मिलता ही रहेगा, हमें देखते रहना है। क्या हो रहा है, उसे देखो, वही अपना मार्ग है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इसे 'देखते' रहने के अलावा दूसरा क्या पुरुषार्थ है?

दादाश्री : उसे देखते रहना है, लेकिन उसे उस तरह से देख नहीं पाते हैं। देखना भी इतना आसान नहीं है। पुरुषार्थ करना पड़ेगा आपको। पुरुषार्थ करोगे तो देख पाओगे।

प्रश्नकर्ता : कैसा पुरुषार्थ करना होता है?

दादाश्री : वही पुरुषार्थ करना है कि अंदर यह क्या जल रहा है और किस तरह हो रहा है।

प्रश्नकर्ता : वह 'देखना' कहा जाएगा न?

दादाश्री : लेकिन देखना आसान नहीं है। देखा नहीं जा सकता मनुष्य से। मनुष्य देख ही नहीं सकता। पुरुषार्थ करे तो देख पाएगा। पुरुष होकर पुरुषार्थ करेगा तभी देख पाएगा। तन्मयाकार नहीं होने दे। यह तो तन्मयाकार होकर उसे देखता है, उसका अर्थ ही नहीं न! 'मीनिंगलेस' बात है न!

प्रश्नकर्ता : तो किस तरह जुदा रहकर देखना है?

दादाश्री : पुरुषार्थ करके! उसमें यदि 'व्यवस्थित' के आधार पर तन्मयाकार हो जाए, तो तन्मयाकार नहीं होने देना और खुद, अपने आपमें ही रहना, उसे अलग रखना और उसे अलग देखना, वही पुरुषार्थ है! अब ऐसा जानना-देखना तो रह नहीं पाता है न!

बस 'महात्मा' तो सिर्फ कहते हैं कि 'हम देखते और जानते हैं।' अपने सभी 'महात्मा' कहते हैं कि 'हमें तो सब देखना और जानना है।' मैंने कहा, 'बहुत अच्छा।' लेकिन किस तरह से देखना-जानना है?! यह तो सभी कहते हैं तो भी मैं 'लेट गो' कर देता हूँ। मैं जानता हूँ कि 'फर्स्ट स्टैन्डर्ड' ऐसा ही होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उदय तो, चौबीसों घंटे उदय तो रहेंगे ही न!

दादाश्री : वह उदय ही है, दिन भर ही। हाँ, फिर उसके साथ ही साथ उदय में तन्मयाकारपन भी है और तन्मयाकार नहीं होने देना, वह पुरुषार्थ है। वह पुरुषार्थ ही काम करता है लेकिन कई जगहों पर पुरुषार्थ कम होता है। अधिकतर तो यों ही तन्मयाकार रहा करता है। पता चले बिना ऐसे ही बीत जाता है पूरा दिन ही! और फिर कहेगा 'मैंने देखा-जाना!' अरे, क्या देखा-जाना? ऐसा किसके लिए कह रहा है? भूत देखे क्या तूने?

देखना तो क्या है? कि 'व्यवस्थित'

तन्मयाकार होने दे रहा हो, उसे जानना कि 'व्यवस्थित' इस तरफ ले जा रहा है, उसे खींचकर हमें इस तरफ लाना है और खुद को 'उसमें' रखकर और वहाँ से वापस देखना है और क्या जलन होने लगी, उसे देखना है। पुरुषार्थ ऐसा कुछ होता है, पुरुषार्थ अर्थात् पुरुष के आधार पर होता है।

क्या ऐसा आसान है 'देखना-जानना'? लेकिन सभी 'महात्मा' ऐसा कहते हैं 'हम तो दादा, देखते हैं और जानते हैं। पूरे दिन वही।' मैंने कहा, 'बहुत अच्छा।' क्योंकि उन्हें गहन बात का पता नहीं चलता और मेरी माथापच्ची हो जाती है। यह तो आपके कारण ऐसी गहन बात कर रहा हूँ। नहीं तो गहन बातें की ही नहीं जा सकती।

जहाँ 'पसंद है', वहाँ तन्मयाकार

प्रश्नकर्ता : देखने और जानने में बहुत संघर्ष चलता है। अत: जो-जो संयोग मिलते हैं, उनमें बह जाते हैं।

दादाश्री : तो जो बह जाता है वह कौन है? आप तो शुद्धात्मा हो। शुद्धात्मा कैसे बह सकता है? चंदूभाई नाम का *पुद्गल* बह जाता है।

प्रश्नकर्ता : देखने-जानने में वैसी स्थिरता रहनी चाहिए न?

दादाश्री : नहीं, वह स्थिरता नहीं रहेगी। बल्कि अगर स्थिरता रहेगी तो मुश्किल आ पड़ेगी। यदि सिनेमा की फिल्म स्थिर हो जाए तो फिर क्या 'देखोगे' उसमें? वह तो चलती ही रहनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : नहीं। वह तो चलती रहेगी लेकिन यही कि हम उसके साथ न चलने लगें और हम स्थिर रहें।

दादाश्री : नहीं। हमें 'देखते' रहना है। 'देखने वाला' तो हमेशा स्थिर ही होता है। 'देखने वाला' कभी बह नहीं जाता। आप 'देखते' नहीं हो इसलिए उससे उल्टा अभ्यास हो जाता है। यदि ज्ञायकभाव में रहोगे तो कभी भी बह नहीं जाओगे और भावनाओं के वश में हुआ कि बहा। भावनाओं के वश में आने से तो लोग सिनेमा में भी बह जाते हैं। रोते हैं, हाँ! अरे, लेकिन जहाँ सिर्फ देखना ही था, वहाँ तू रो क्यों रहा है? जहाँ सिर्फ देखना ही है, वहाँ रोता है! रोता है न? और फिल्म यदि एक ही तरह की हो तो देखना अच्छा लगेगा क्या?

प्रश्नकर्ता : अच्छा नहीं लगेगा, दादा।

दादाश्री : हं। फिल्म में कभी शादी होती है, कभी मारपीट होती है, कभी अपहरण होता है, तभी देखना अच्छा लगता है न! यदि पूरी फिल्म में लगातार शादी ही चलती रहे तो अच्छा नहीं लगेगा न? अत: यह पूरी फिल्म देखनी है। जिसमें आनंद ज़रा सा भी कम नहीं हो, वही अपना विज्ञान!

शक्ति तो पूर्ण है ही अंदर लेकिन अव्यक्त रूप से रही हुई है। अधूरी क्यों रहती है? क्योंकि हमें अभी भी यह सब अच्छा लगता है। फिर भी इस ज्ञान के बाद काफी कुछ कम हो गया है न? जैसे-जैसे कम होता जाएगा, वैसे-वैसे शक्तियाँ व्यक्त होती जाएँगी। इसका अर्थ यह नहीं कि यदि कुछ 'अच्छा लगे' तो उसका तिरस्कार करना है। लेकिन यदि उसमें खुद तन्मयाकार हो जाता है, खुद भूल जाता है, खुद की शक्ति भूल जाता है और इसमें तन्मयाकार हो जाता है तो उसका मतलब यह कि वह पसंद है। खाना-पीना लेकिन तन्मयाकार मत हो जाना। देखो, सिनेमा में अगर कोई अच्छी स्त्री या पुरुष हो तो क्या उसके गले लगते हो? और जब कोई किसी को मार रहा हो तो तब क्या उस पर चिल्लाते हो कि, 'ए! क्यों मार रहा है?' 'मत मार', कोई ऐसा कुछ कहता

है? या फिर मन में समझ जाते हो कि देखना ही है, बोलना नहीं है।

कितने साल पहले सिनेमा देखने गए थे? लेकिन तब भी देखा तो था न? तब ऐसा कुछ नहीं कहते थे न कि 'क्यों मार रहा है?' हं, वहाँ पर देखना ही है सिर्फ! वह फिल्म ऐसा नहीं कहती कि आप हमें अपने साथ ले जाओ। फिल्म तो कहती है कि देखकर चले जाओ लेकिन अगर आप उल्टा करो तो उसमें बेचारी फिल्म क्या करे? लेकिन अगर खुद गोंद चुपड़कर जाए, तब फिर क्या हो सकता है? उस गोंद (राग-द्वेष) को धोकर जाना पड़ेगा। खुद गोंद चुपड़कर जाता है इसलिए फिर जो भी होता है वह चिपक जाता है!

आपका 'मोह' ही आपको तन्मयाकार करता है

शादी के, व्यवहार के काम निपटाने हैं। उन्हें मैं भी व्यवहार से निपटाता हूँ और आप भी निपटाते हो। लेकिन आप तन्मयाकार होकर निपटाते हो और मैं उनसे अलग रहकर निपटाता हूँ। अत: भूमिका बदलने की ज़रूरत है और कुछ बदलने की ज़रूरत नहीं है। भगवान महावीर भी कुछ समय तक व्यवहार में रहे थे। वे जन्म से ही 'ज्ञानी' थे, फिर भी व्यवहार में, भाई के साथ, माँ-बाप के साथ रहे, पत्नी के साथ भी रहे, बेटी भी हुई। व्यवहार में रहने के बावजूद भी तीर्थंकर गोत्र पूर्ण किया। उतनी शक्ति आप में भी है लेकिन वह शक्ति आवरणों से मुक्त नहीं हुई है, वह आवरणों से घिरी हुई है।

यानी कि शादी में जाओ लेकिन वे ऐसा नहीं कहते कि 'आप तन्मयाकार रहो।' आपका मोह आपको तन्मयाकार करता है। वर्ना यदि आप तन्मयाकार नहीं रहोगे, तो कोई आपको डाँटेगा नहीं कि आप तन्मयाकार क्यों नहीं रहते! हम भी शादी में जाते हैं लेकिन मुझे कोई नहीं डाँटता। वे तो बल्कि ऐसा कहते हैं कि, 'आपने मेरा कल्याण कर दिया!' यदि तन्मयाकार रहोगे तो कुछ न कुछ भूल हो जाएगी, तब फिर लोग आप पर चिल्लाएँगे।

व्यवहार करने में हर्ज नहीं है, लेकिन व्यवहार में एक रूप हो जाते हैं, उसमें हर्ज है। खुद के स्वरूप में एक रूप होना चाहिए और व्यवहार तो उपलक है, सुपरफ्लुअस है।

अत: ज़्यादा उपकारी कौन है? जो तन्मयाकार नहीं रहते, वे संसार के लिए ज़्यादा उपकारी हैं। खुद के लिए भी उपकारी हैं और दूसरों के लिए भी उपकारी हैं। वे सभी प्रकार से उपकारी हैं। हमने आपको भी ऐसा रास्ता बताया है, जिससे कि तन्मयाकार न रहो। खुद की भूमिका में रह सकते हैं, पराई भूमिका में नहीं जाएँ, ऐसा है अपना यह ज्ञान। पराई भूमिका अर्थात् चंदूभाई।

तन्मयाकार नहीं होना, वही पुरुषार्थ

तन्मयाकार कौन-कौन होता है? ऊँगली उठाओ, देखते हैं? सात-आठ ही लोग! उस समय आपको क्या अनुभव होता है, बताओ?

प्रश्नकर्ता : तन्मयाकार नहीं होता लेकिन तदाकार हो जाता है।

दादाश्री : तदाकार हो जाता है! तन्मायाकार होना यानी कि ज़बरदस्त प्रवाह है। तो अब वह तदाकार होता है यानी कि अब, थोड़ी बहुत बुद्धि चली गई। कुछ और बुद्धि कम हो जाने के बाद तो आनंद और भी बढ़ता जाएगा। मैंने यह जो दिया है वह आनंद का धाम ही दिया है, मोक्ष ही दिया है। जो बुद्धि संसार में मदद (हेल्प) करती थी, ज्ञान लेने के बाद अब वह बुद्धि दखल करती है।

प्रश्नकर्ता : यह आनंद रिएक्शनरी(प्रत्याघाती) नहीं है, इसलिए अंदर उच्च प्रकार का आनंद होता है।

दादाश्री : उच्च प्रकार का आनंद अर्थात्

आत्मा का जो मूलभूत आनंद स्वरूप है, वही आनंद आपको दिया है! लेकिन इसमें जो बुद्धि है, वह हमें संसार में बड़ा बनाती थी। जो बुद्धि बहुत बड़ा झंडा दिखाती थी, वह बुद्धि अब नहीं रही।

इतना सुख उत्पन्न हुआ है, कितनी समाधि रहती है, उसके बावजूद भी यदि कभी बुद्धि गड़बड़ करे न, तो आपको बुद्धि से कह देना है, 'हे बुद्धि, तुझे तो अंडमान के टापू में छोड़ आऊँगा।'

तन्मयाकार होकर, अकेला छोड़ा आत्मा को

प्रश्नकर्ता : यानी कि देखना है कि प्रकृति क्या-क्या करती है?

दादाश्री : उसे देखना तो है ही, लेकिन ज़्यादातर तो खुद प्रकृतिमय ही रहता है। दिन भर प्रकृतिमय ही रहता है। अत: उस समय क्या करना होगा? जिस तरह बच्चे का ध्यान रखते हैं, उस तरह आत्मा का ध्यान रखना पड़ेगा। उसी तरह आत्मा को अकेला नहीं छोड़ना है।

पच्चीस साल की लड़की के पास बच्चा होता है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : होता है।

दादाश्री : तो फिर क्या वह बच्चे की तरफ से ध्यान हटाती है?

प्रश्नकर्ता : नहीं हटाती।

दादाश्री : जब नहाने जाती है तब अलग होना पड़ता है, लेकिन ध्यान नहीं हटाती। उसके ध्यान में ही रहता है कि, 'वह रो रहा होगा, उसे ठंड लग रही होगी या क्या हो रहा होगा? क्या कर रहा होगा? वह ऐसा कर रहा होगा'। इसी तरह आत्मा को भी नहीं छोड़ना है। क्योंकि इस दुनिया में अगर कोई किसी पर से ध्यान नहीं हटाता तो, वह स्त्री है जो अपने बच्चे पर से ध्यान नहीं हटाती। नहाते समय, खाते समय भी भूलती नहीं है, 'अरे! बच्चा रोया, उसे ऐसा हुआ, वह दूर चला गया, वह गिरने लगा है।'

प्रश्नकर्ता : दादा, वह तो, यदि पति को सौंपकर जाए, तब भी उसे नहीं भूलती।

दादाश्री : तब भी कहती है, 'यह बेवकूफ है। इसका कोई ठिकाना नहीं है!'

प्रश्नकर्ता : उसकी जान वहाँ बच्चे में ही रहती है।

दादाश्री : ऐसा रहना चाहिए। हम एक क्षण भी आत्मा को भूले नहीं हैं। यह ज्ञान होने से पहले अंतिम दो-पाँच सालों में ध्यान नहीं हटने दिया। इसीलिए मैंने माँ का उदाहरण दिया कि क्या वह ध्यान हटा देती है? पूछकर देखना किसी माँ से कि क्या वह भूल जाती है? वर्ना यदि आप खुद माँ हो तो कैसे रखोगी, वह जाँच करो तब आपको पता चलेगा कि भूलती नहीं है!

प्रश्नकर्ता : वह तो किसी भी माता की चेष्टाओं को देखने से तुरंत ही पता चल जाता है।

दादाश्री : उसी प्रकार से आत्मा को भी नहीं भूलना है। तो इसमें क्या मुश्किल है? स्त्री के तो कितने ही बच्चे होते हैं। वह उन्हें कभी भूलती ही नहीं है फिर भी इसके लिए उसे कोई बड़ा इनाम नहीं मिलता, जबकि इसमें तो बड़ा इनाम मिलेगा। इसमें तो मोक्ष रूपी फल मिलेगा इसलिए एक जन्म के लिए आत्मा को भूलेंगे नहीं।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, यह जो माँ बच्चे का ध्यान रखती है, उसकी सुरक्षा का ध्यान रखती है कि कहीं लग न जाए, कहीं जल न जाए, कहीं कुछ गलत न कर बैठे, तो आत्मा से संबंधित ऐसा क्या ध्यान रखना है हमें?

दादाश्री : वह ऐसा न हो जाए, ऐसा न हो जाए, इस तरह से भी बच्चे का ध्यान रखती है न, उसी तरह आत्मा का ध्यान रखना है। आत्मा

ऐसा तो है नहीं कि जल जाए। आत्मा का ध्यान अर्थात् आत्मा की वैसी जागृति रहनी चाहिए, चूकना नहीं चाहिए किसी भी प्रयोग में।

प्रश्नकर्ता : दादा, उसमें तो माँ के *लक्ष* (जागृति) में रहता है। बच्चे की बात तो अलग है लेकिन यहाँ पर हम सब को ऐसा *लक्ष* नहीं रहता कि आत्मा का कहाँ चूक जाते हैं। आत्मा का ध्यान हम कहाँ पर नहीं रखते हैं? कहाँ पर स्लिप हो जाते हैं? वह बताइए तो ध्यान रहेगा।

दादाश्री : जिस तरह से बच्चे को रखते हैं, उसी तरह से इसे भी रखने की ज़रूरत है। भूलना नहीं चाहिए। वैसा क्यों हो जाता है? आपको दूसरी चीज़ों का स्वाद चखने की आदत पड़ गई है इसलिए। यह चाहिए और वह चाहिए, सभी भौतिक इच्छाएँ। किसी भी प्रकार की इच्छा होनी ही नहीं चाहिए न? ये सारी इच्छाएँ बंद हो जाएँ, 'जो आए वह ठीक है', ऐसा करके रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् जब अन्य कहीं पर तन्मयाकार हो जाते हैं, तब क्या ऐसा कहा जाएगा कि आत्मा को भूला दिया?

दादाश्री : भूला ही दिया न, नहीं तो और क्या? लेकिन अन्य इच्छाएँ होनी ही नहीं चाहिए न! जो प्राप्त हो जाए उसे भोगो। मेरा कहना यह है कि यहाँ बैठे-बैठे आइसक्रीम खाओ न, मैं कहाँ मना करता हूँ। लेकिन फिर दूसरी और तीसरी माँगते रहो तो वह गलत है। लेकिन तेरे हाथ में आया हुआ तू फिर छोड़ता नहीं है न, और यदि आत्मा *लक्ष* में रहे तो दस बार खाओ न! लेकिन आत्मा *लक्ष* में नहीं रहता और फिर खाते ही रहो, तो वह कैसे पुसाएगा?

प्रश्नकर्ता : दादा, क्या ध्यान इसलिए नहीं रहता कि इसकी कीमत समझ में नहीं आई है? अभी ध्यान क्यों नहीं रहता है?

दादाश्री : यदि कीमत समझ में आ जाए तो फिर आपने जहाँ पर हीरा रखा होगा, चित्त वहीं पर रहेगा न। एक अरब का हीरा, यदि इधर-उधर हो जाए तो फिर वापस देखने आता है अगर पाँच सौ रूपये का हो तो! उसकी कीमत आपको समझ में आई है लेकिन यह पहले की आदतें जाती नहीं हैं! पौद्गलिक आदतें हैं न!

फाइल को नहाना-धोना पड़ता है या फिर नौकरी नहीं करनी पड़ती? नौकरी करते समय भी आत्मा को भूलना नहीं है।

प्रश्नकर्ता : यानी कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा *लक्ष* में रहना चाहिए?

दादाश्री : हाँ, वह नहीं चूकना चाहिए। आप यह जो नौकरी करते हो न, तो यह भान नहीं चूकना चाहिए कि हम आत्मा ही हैं। भूल नहीं जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : हम जब दादा के पास से चले जाते हैं, तब दादा से दूर हो जाते हैं लेकिन उन्हें भूलते नहीं हैं हम।

दादाश्री : हाँ, वह तो आप सब को अपने आप ही कुदरती रूप से रहता है, भूलते नहीं हो। इतना जो याद रहता है उसे, 'रहता है', कहा जाएगा जबकि वह (आत्मा को याद) रखना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : दादा प्रत्यक्ष हैं इसलिए याद रहते हैं। लेकिन ज्ञान देने के बाद में यह भी याद रहना चाहिए न, कि 'मैं आत्मा हूँ'?

दादाश्री : 'मैं शुद्धात्मा हूँ' वह तो *लक्ष* में है ही। यदि, नगीन भाई है तो वह अपने आपको जानता ही है कि, 'मैं नगीन भाई तो हूँ'। 'नगीन भाई हूँ', ऐसा कुछ याद रखने की ज़रूरत नहीं पड़ती। उसे क्या याद करना? है ही।

प्रश्नकर्ता : तो फिर इसे (आत्मा को) भूलने का प्रश्न ही नहीं उठता न?

दादाश्री : हाँ, लेकिन हम जो नहीं हैं, उसी को अभी तक, 'है' माना है और जो है, उसे 'नहीं है' ऐसा माना है तो इतना बदल जाने की वजह से हमें उसे (आत्मा को) याद रखना है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् उसका अर्थ यह हुआ कि वह जो पुराना अध्यास है, वह वापस बीच में आता है?

दादाश्री : वही तो बीच में आता है न! उसी की वजह से भूल जाते हो और फिर यह मल्टिप्लिकेशन वाला है। एक दिन यदि संभालकर रखोगे तो दो दिन की शक्ति उत्पन्न हो जाएगी। दो दिन तक रखोगे तो चार दिन की शक्ति उत्पन्न हो जाएगी और अगर उसे संभालोगे नहीं, तो लीक ही होता रहेगा न पूरा!

तप में बचाव किया, इसका मतलब कि रिश्वत ले ली

अपने महात्मा लगभग पाँच ही प्रतिशत तप करते हैं। तप तो करना चाहिए न? अभी जब आपको समभाव *निकाल* करना पड़ता है, उस समय तप नहीं करते?

प्रश्नकर्ता : करना ही पड़ता है न, दादा।

दादाश्री : वे छोटे-छोटे, लेकिन उसके बाद बड़े तप होने चाहिए। यदि बेटा मर जाए, रास्ते में कोई एक लाख रूपये के जेवर लूट ले, तब भी असर नहीं, पेट का पानी भी न हिले तो वह है दादा का विज्ञान! यदि बुद्धि के कहे अनुसार किया तो वापस जैसे थे वैसे ही बन गए न! वहाँ तप करना है। यदि आप रास्ते में लुट जाओ तो क्या करोगे?

प्रश्नकर्ता : हाय-हाय तो नहीं करेंगे। वह वापस मिले या ना मिले, उसकी बहुत नहीं पड़ी है लेकिन मन में ऐसा तो रहेगा ही कि, 'मुझे लूट गया।'

दादाश्री : उससे हमें क्या फायदा होगा? हमें क्या हेल्प होगी, वह देखना है न! वे लूट नहीं जाते, वे उनका अपना ही ले जाते हैं। हमारा कोई नहीं ले जा सकता।

प्रश्नकर्ता : अंदर तप कैसे उत्पन्न होता है? लुट जाने के बाद क्या करना है?

दादाश्री : जब अंदर वाला तप (दु:खी हो) जाता है तब फिर वह तप सहन नहीं होता इसलिए वह शोर मचाता है। ऐसे में ज्ञान से तप करना है। उस समय हृदय तपेगा, सहन नहीं होगा। एक के बाद एक विचार के भंवर चलेंगे। तब उस तपे हुए को देखते ही रहना है। सामने वाले के लिए मन नहीं बिगड़ना चाहिए। यदि ज़रा भी मन बिगड़ जाए तो उसे तप कहेंगे ही कैसे? चाहे कैसी भी परिस्थिति हो लेकिन उसमें यदि समता रहे तो वही अदीठ तप है! इसके अलावा और क्या है? सबकुछ खुद का ही है, पराया नहीं है। पराया हो और आपको भुगतना पड़े, ऐसा नहीं हो सकता। अत: इसमें प्योर (साफ) रहना है। प्योर होना है, इम्प्योरिटी नहीं रहनी चाहिए। सारा कचरा निकल जाएगा, दादा के पास तो सबकुछ निकल जाता है। दादा सभी को भगवान बना देते हैं। वह बदलाव (परिवर्तन) आपने नहीं देखा?

बाहर के ये तप तो लोगों को दिखाई देते हैं और अंतर तप को तो सिर्फ, आप ही जान सकते हो। जहाँ नापसंद हो वहाँ पर स्थिर रहना है। नापसंद हो फिर भी, किसी को परेशानी न हो, इस तरह से शांति से रहना है। जबकि बाहर के लोगों को जब तप आता है तब वे सामना करते हैं, खुद का बचाव करते हैं। आपको बचाव नहीं करना है। बचाने का भाव हुआ यानी कि रिश्वत ले ली। आपने उस तप का पूरा-पूरा लाभ नहीं उठाया।

प्रश्नकर्ता : यदि अदीठ तप करेंगे, तो उसे समभाव से *निकाल* कहा जाएगा न?

दादाश्री : सारा *निकाल* हो गया। उसमें यदि

रिश्वत ले लें तो वहाँ वह ज़रा बाकी रह जाता है। जितनी रिश्वत ली उतना बाकी रहा। यदि *निकाल* कर दिया तो वह गया। उस समय आत्मा हल्का हो जाता है इसलिए आनंद ही रहता है। बहुत तप जाए तब फिर क्या करते हो? शोर मचाते हो? झगड़ा करते हो? फिर किसी का गुस्सा किसी और पर निकालते हो। जो भी फाइल हो उस फाइल को वहीं पर निपटा देना है। किसी और फाइल का उसके साथ कोई कनेक्शन (लेना-देना) नहीं है, वर्ना, किसी का गुस्सा किसी पर निकालता है।

'उससे' हमें' अलग रखना है। यों तो खुद अलग रहता है, लेकिन यदि कोई कहे कि 'आपने हमारा पाँच हज़ार का नुकसान कर दिया,' तो उस समय वह एक हो जाता है। तब तप करना है। उस समय झटका लगेगा कि 'मैंने तो नहीं किया।' झटका क्यों लगता है? क्योंकि मन में ऐसा होता है कि, 'इसने मुझ पर आरोप लगाया।' तब फिर 'मैं शुद्धात्मा हूँ' रहेगा या 'वह' रहेगा? उस समय तप करके फिर 'मैं शुद्धात्मा हूँ' रहना चाहिए।

लोन लिए बगैर पुराना री-पे करना, वही तप है

भगवान ने किसे तप कहा था? 'कलियुग में जो घर बैठे आ पड़े, वह तप करना।' ऐसा मुफ्त में प्राप्त तप कौन छोड़ेगा? अभी यदि बस में बैठा हो और तब कोई जेब काट ले।' इस जेब में पाँच सौ थे और इसमें ग्यारह सौ थे। ग्यारह सौ वाली जेब काट ले तब फिर तुरंत ही अंदर वृत्तियाँ शोर मचाने लगेंगी, 'उसे तीन सौ देने थे, उसे पाँच सौ देने थे।' हम जब समभाव से *निकाल* करने जाएँ तब वृत्तियाँ क्या कहेंगी? 'नहीं, नहीं। यह क्या समभाव से *निकाल* कर रहे हो?' उस समय आपको तप करना है। तब हृदय लाल-लाल हो जाएगा, उसे देखते रहना है। अंदर अकुलाहट हो जाएगी। आप जानते हो कि कुछ देर बाद यह तप खत्म हो जाएगा। लेकिन हृदय तपेगा। जबकि संसार के लोगों का तो जब तपता है न, तब वह उनसे सहन नहीं होता। इसलिए वे सामने वाले पर अटैक कर देते हैं। आप अटैक नहीं करते और तपने देते हो, ऐसा होता है या नहीं? यदि अटैक करने पर तपना बंद हो जाएगा। यानी कि नया लोन लेकर पुराना चुकाया। जबकि तप तो क्या है कि नया लोन लिए बगैर पुराना री-पे कर (चुकाना) देना। मुश्किल हो जाएगा। नहीं? मुश्किल होगा।

अब, आपको कौन सा तप करना है? तब कहते हैं, ये जितने तप आँखों से दिखाई देते हैं, कानों से सुनाई देते हैं, वे सभी तप 'सफल' है। सफल यानी कि फलदायी हैं, बीज रूपी हैं। अत: वे फल देंगे। इसलिए यदि तुझे छूटना हो तो 'सफल' तप नहीं चलेगा। 'निष्फल' तप होना चाहिए। ऐसा जिसमें तपना पड़े, फिर भी फल नहीं आए। जिसमें संसार में तप की ये जो सभी क्रियाएँ चल रही हैं, इससे तो अगले जन्म के लिए पुण्य बंधन होगा। आपने तो यह ज्ञान लिया है, अत: आपको रहना तो इस ज्ञान में ही है लेकिन यदि कोई आकर छेड़छाड़ करे कि 'साहब, आपने हमारा क्यों बिगाड़ा, वगैरह वगैरह।' तो तब इस ज्ञान की वजह से आपको तो उलझन होगी ही नहीं। आप हल (सॉल्युशन) ला सकते हो लेकिन चंदूभाई पर थोड़ा-बहुत असर हो जाएगा। अत: फिर चंदूभाई का खुद का ही हृदय तपेगा। ऐसे में पहले तन्मयाकार हो जाते थे, लेकिन अब नहीं होना है, वही तप है। पहले तो ज़रा सा हृदय तपा कि तन्मयाकार। लेकिन इसमें तन्मयाकार नहीं होना, वही तप है। अत: यह तप ही मोक्ष में ले जाएगा।

पर-परिणति को अलग देखा, वहाँ तप

पर-परिणाम को यदि अलग रहकर नहीं देखोगे, तन्मयाकार हो जाओगे तो चौथा पाया (स्तंभ) तप का कमज़ोर हो जाएगा। अब, चौथे पाये मज़बूत बनाना है।

आत्मा के अलावा बाकी सबकुछ पर-परिणति है और स्व-परिणति में रहना ही ज्ञान का लक्षण है। विचार आना भी पर-परिणाम है।

मन जो कुछ भी बताए, उसे देखते रहना है। मन न तो निंदनीय है और न ही सराहनीय।

तप क्या है? मन जो भी दिखाए तब उसे देखते रहना, वही तप है और अंदर तप तो आते ही रहेंगे। उस समय थोड़ी देर के लिए तपना पड़ेगा। जब ज्ञाता-द्रष्टा नहीं रह पाओ, तब तप करना पड़ेगा।

चाहे भगवान हों या ज्ञानी, फिर भी ज्ञान-दर्शन-चारित्र और तप, इन चार पायों के बगैर कोई मोक्ष में नहीं जा सकता। ये चार पाए होने ही चाहिए। भगवान जो तप करते हैं, वह गरम नहीं होता, वह तप ठंडा होता है। वह जलाता नहीं है। तप अर्थात् जलाना। भगवान का तप ठंडा होता है। यदि ये लोग तप को ऐसा (जलाना) कहते हैं तो इनके लिखने में गलती है। वह तप कैसा होता है? ज्ञान, यानी कि पहले 'मैं क्या हूँ' उसका भान। उसके बाद दर्शन, उसकी प्रतीति। हमेशा प्रतीति रहती है। उसके बाद चारित्र अर्थात् उसी प्रकार का आचरण होना। ज्ञान तो दर्शन है जबकि तप तो, उन्हें सिर्फ इतना ही देखते रहना है कि *पुद्गल* परिणाम में ऐसा नहीं लगना चाहिए कि यह मैं कर रहा हूँ। जागृति रखनी है। नींद न आ जाए, उसे भगवान ने तप कहा है। यानी कि जागृति जानी नहीं चाहिए।

हमारा तप, हमें घड़ी भर भी संसार में नहीं रहने देता। ऐसा तप होता है। एक क्षण के लिए भी हमें संसार में नहीं टिकने देता। वह हमारा तप है। तप अर्थात् कभी भी होम (आत्मा) में से फॉरेन डिपार्टमेन्ट (अनात्मा) में न जाए। फॉरेन में ज़रा सा झांकने लगे, उससे पहले ही अंदर से आवाज़ लगाता है। अत: होम और फॉरेन के बीच में जो संधि स्थान है, वहाँ पर हमारा तप है। इसलिए हमें एक सेकन्ड के लिए भी पर-परिणति नहीं रहती।

हमें पर-परिणति को निकालना नहीं पड़ता। पर-परिणति उत्पन्न भी नहीं होती और होगी भी नहीं। जबकि, इन सभी को पर-परिणति खाली करनी पड़ती है। पर-परिणति नहीं रहते, स्व-परिणति में ही रहते हैं लेकिन पर-परिणति के जो परिणाम उत्पन्न होते हैं, उन्हें खाली करना पड़ता है, हटाना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : दूर करना ही पड़ेगा, धक्का मारकर भी बाहर निकालना पड़ेगा।

दादाश्री : धक्के मार-मारकर। क्योंकि इस एक जन्म में ही अनंत जन्मों का हिसाब पूरा कर देना है।

तप के समय में समझ

प्रश्नकर्ता : तप के समय कैसी समझ होनी चाहिए।

दादाश्री : यह मेरे हित में हो रहा है। दादा जो भी कहते हैं, वह सब मेरा है और जिसके लिए दादा मना करते हैं, वह मेरा नहीं है, अंदर इस तरह से अलग करना।

प्रश्नकर्ता : इतना ज़्यादा सुलगता है न! लगता है कि यह सहन नहीं होगा। फिर भी अंदर ऐसा लगता है कि 'यह हित का है, काम का है, इसे बंद नहीं करना है।' फिर ऐसा रहा करता है।

दादाश्री : ज्ञान नहीं जलेगा, जो अज्ञान है, वही जलेगा। अत: तुझे आराम से सो जाना है। जलने देना है, भले ही सबकुछ जल जाए। ज्ञान का नहीं जलेगा, उसकी हम गारन्टी देते हैं।

अंतर तप तो भगवान बना देता है। जब अंतर तप हो, तब समझना कि ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप ये चारों स्तंभ हैं, ऐसा पक्का हो जाता है। जब सिर्फ ज्ञान-दर्शन होगा तब चारों स्तंभ पूरे नहीं

होंगे। इसीलिए आप पुण्यशाली हो कि आप में अंतर तप चलता रहता है। वह उत्पन्न करने से नहीं हो सकता। यदि आप जान-बूझकर उत्पन्न करने जाओ तो हो पाएगा क्या? अभी यदि कोई इस तरह से हाथ पकड़कर कहे कि, 'कहाँ जा रहे हो, चलो।' तब वहाँ अंतर तप शुरू हो जाएगा।

हमें निरंतर तप रहता है। आपका तप स्थूल तप है, हमारा तप तो बहुत सूक्ष्म होता है। लेकिन जब यह स्थूल जल जाएगा, उसके बाद स्थूल में से सूक्ष्म तप आएगा। सूक्ष्म में से सूक्ष्मतर तप आएगा। उसके बाद आपका तप मेरे तप के नज़दीक तक पहुँचेगा।

यानी कि जैसे-जैसे इसे सुनते जाओगे वैसे-वैसे आपको समझ में आता जाएगा। आपको कहाँ तप करना है? यह तो जहाँ तप करना हो वहाँ उत्तेजित हो जाते हो। दूसरों को तप करवा देते हो! फिर दूसरे लोग तप कर लेते हैं! समभाव से *निकाल* कर लो न! हमें तो रात-दिन तप ही है। आपने तो तप किए ही नहीं हैं। सो जाते हो गहरी नींद, सुबह होते तक!

यदि किसी को डाँटने के बाद चंदूभाई को मन में संतोष हो कि, 'मैंने उसे डाँटकर ठीक ही किया है', इसका मतलब उसे तप नहीं रहा। वह हमें कुछ कहे, लेकिन यदि हम उसे डाँट देते हैं तो हमें उस समय तप नहीं करना पड़ता। वहाँ पर यदि आप नहीं डाँटोगे तो तप ही होगा न! मन व्याकुल ही रहेगा न!

यदि मन को खुराक दे दी तो तप में खंडन

अपना तप कैसा होना चाहिए कि तपना चाहिए, मन को तपाना चाहिए। यानी कि जब वैसा टाइम आए, मन तपने लगे तब मन को खुराक चाहिए। उस समय तो उसे मीठी खुराक दे देते हो। फिर घर की किसी चीज़ को याद करके मन में डाल देते हो या कुछ और डाल देते हो, तो उसे तप नहीं कहेंगे। तप तो उसे कहेंगे कि उस समय आप उसे आत्मा से जोड़ दो। यदि आत्मा का शुद्ध उपयोग करोगे, तो वह तप कहा जाएगा।

मैं इन बच्चों से पूछता हूँ, 'अरे, अंदर जब चिंता होती है तब क्या करते हो?' तब कहते हैं, 'सिनेमा में जाकर टाइम पास कर लेते हैं' यानी कि यों ही दुरुपयोग कर लेते हैं। जब तप करने का समय आए तब सिनेमा में जाकर मौज कर आते हो। यानी कि सौ रूपये का नोट दो रूपये में दे देते हो। आपको तो ऐसा करना चाहिए ताकि सौ का नोट हज़ार का हो जाए। यानी कि जब ऐसा हो जाए, तब उन सभी के अंदर बैठे हुए शुद्धात्मा को देखना। दूसरा देखना, तीसरा देखना या फिर अपने आसपास वाले सभी रिश्तेदारों को याद करके उनके प्रतिक्रमण करने चाहिए। रिश्तेदारों के साथ तो सभी के बखेड़े होते ही हैं न? उन सभी के, पड़ोसी के, फलाना देखो, तीसरा देखो, चौथा घर, पाँचवाँ घर, इस तरफ के घर। फुरसत में सभी के प्रतिक्रमण करना। ऐसा सब सेट कर देना। सबकुछ साफ कर लोगे तो साफ-सुथरा। आपको ही करना पड़ेगा। कोई करने नहीं लगेगा न? कोई और करेगा क्या? तब फिर क्या वाइफ करेगी? वह अपना करेगी या आपका करेगी? तो जब इस तरह से सेट करना पड़े, तब उसे तप कहा जाएगा। तप यानी कि मन को पंसदीदा चीज़ नहीं देना और दूसरी तरफ मोड़ लेना। मन को पसंदीदा चीज़ दे देता है न?

प्रश्नकर्ता : कभी-कभी दे देनी पड़ती है।

दादाश्री : वह तो ठीक है। कभी-कभी देने में हर्ज नहीं। ऐसा तप नहीं मिलेगा न! आप वहाँ होटल में जाकर मन को आनंद करवाओगे तो, वह नहीं चलेगा।

जहाँ ध्येय के विरुद्ध है, वहाँ होता है तप

जब तप होगा तभी अनुभव होगा न, वर्ना

अनुभव कैसे होगा? जिस बात से अपना अंतर तपता है, उससे दूर रहना चाहते हैं। जबकि अंतर तपने से ही हमें अनुभव होगा।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् जिस-जिस बारे में तप होता है। वे फिर छूट जाती हैं।

दादाश्री : वे जो छूट जाती हैं न, वही उसका अनुभव है, वही आत्मा का अनुभव है, बस! सुख और प्रकाश बढ़ता जाएगा, बस।

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्या होता है कि तप करना पड़ता है?

दादाश्री : जब हम मन-बुद्धि-चित्त और अहंकार के विरुद्ध करने जाते हैं, उस समय वे ज़ोर लगाते हैं। तब हमें तप करना पड़ता है, उस समय जलता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि अपने ध्येय के अनुसार हो, तब तप नहीं होगा न?

दादाश्री : वहाँ नहीं होगा। यदि ध्येय के विरुद्ध हो, तब तप होता है और वह होना ही चाहिए। वह हमेशा के लिए नहीं, लेकिन तप होना ही चाहिए। यदि तप नहीं होता है तो फिर आधार ही गलत है। चारों आधार (स्तंभ) होने चाहिए।

विषय पसंद नहीं है। ध्येय तय किया हो कि, 'अब तो मुझे ब्रह्मचारी ही रहना है', फिर जब वह किसी स्त्री को देखेगा तब क्या उसे तप नहीं करना पड़ेगा? उस समय यदि वह ठीक से सम्यक् तप में तपे, ज़रा भी नहीं ललचाए तो उसे तुरंत अनुभव होगा ही। उसी को तप कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : यानी कि जहाँ पहले मिठास लगती थी, वहाँ अब खुद का दर्शन उत्पन्न हुआ कि 'यह मैं नहीं हूँ', इसलिए वहाँ पर तप शुरू हो जाता है। फिर वापस उसमें मिठास आने लगती है और तप खत्म हो जाता है।

दादाश्री : नहीं। फिर जब सहन नहीं होता तब वापस मिठास में घुस जाता है। तप के लिए तो निश्चय बल की ज़रूरत है। एक व्यक्ति मुझसे कहने लगा, 'लो, अँगूठा रखो देखते हैं।' मैंने कहा, 'लो, रखा।' तब वह कहने लगा, 'सिगरेट जलाता हूँ।' मैंने कहा, 'दियासलाई जलाओ न?' तो उसने दो दियासलाई जलाई। तब तक मैं वैसा का वैसा ही खड़ा रहा! वह किस आधार पर तप में तपा? भीतर अहंकार है, जो होना हो वह हो जाए। उसी तरह का निश्चय इसमें भी कि 'अब जो होना हो, वह हो, हम आपके साथ नहीं फँसेंगे। अनंत जन्म फँस गएँ, अब नहीं फँसेंगे।' अब, हम ध्येय को नहीं तोड़ना चाहते। यदि निश्चय नहीं होगा तो तुरंत मिठास खींच ले जाएगी।

जो उल्टा करे, उसकी ज़िम्मेदारी

ऐसी तेज़ हवा चले कि जो व्यक्ति को उड़ा दे, वहाँ यदि आपका निश्चय होगा तो बैठे रहोगे। लेकिन यदि ऐसा निश्चय हो कि नहीं उड़ेंगे, कुछ भी नहीं होगा तो आप बचे रहोगे। और यदि कोई कहेगा कि, 'अरे, उड़ जाएँगे, उड़ जाएँगे', तो उड़ जाएगा। आकाश में उड़ने लगेगा!

प्रश्नकर्ता : उसमें तो हवा उड़ाती है, इसमें कौन उड़ा देता है?

दादाश्री : यह भी वैसी ही तूफानी हवा है न! आकर्षण के प्रवाह में खिंच जाता है। उसे आकर्षण पसंद था इसलिए आकर्षण होता रहता है। यदि खुद का ध्येय साकार करना हो तो पसंदीदा चीज़ें छोड़ देनी पड़ेंगी और जब तक ध्येय अनिश्चत होगा तब तक कुछ भी नहीं हो सकता!

प्रश्नकर्ता : वह अनंत काल की आदतों की वजह से है न?

दादाश्री : चंदूभाई की आदतें। नहीं तो और क्या? ये जो आदतें पड़ी हैं, उसी की वजह से यह झंझट है न! यदि आदत नहीं होती तो कोई हर्ज़ ही नहीं था। लेकिन जब देखो

तब *उपराणा* लेता ही है कि ऐसा प्रकृतिवश हो जाता है। आप कह रहे थे न, कि वहाँ मिठास लगती है। तो वह तप में नहीं आएगा, अदीठ तप में नहीं आएगा। गर्वरस चखता है और मज़े करता है और बल्कि उल्टा बोलता रहता है कि 'हम तो शुद्धात्मा ही हैं, फिर हमें कहाँ झंझट है?' इसलिए हम सभी महात्माओं को यह बता देते हैं। फिर यदि कोई उल्टा करे तो उसकी ज़िम्मेदारी है।

अनंत शक्तियाँ भरी पड़ी हैं लेकिन चंदूभाई का रक्षण करते हो न, इसलिए सभी शक्तियाँ आवरण में छुपी रहती हैं। रक्षण करते हो न चंदूभाई का? खुले आम करते हो न? इसीलिए शक्तियाँ नहीं खिलतीं। यदि इन आज्ञाओं का पालन करते रहोगे तो कभी भी समाधि नहीं जाएगी। आप अपनी कुर्सी पर और चंदूभाई अपनी कुर्सी पर बैठे रहेंगे। आप चंदूभाई की कुर्सी पर बैठने जाते हो, उसी की वजह से यह परेशानी है। पहले की आदत पड़ी हुई है, वह!

अनंत जन्मों का भिखारीपन छोड़ो

किसी को तप करने की भावना है? हाथ ऊपर करो। ये शूरवीर दिखाई देते हैं। कुछ शूरवीरता रखो। बार-बार ऐसा ताल नहीं मिलेगा। फिर से ये दर्शन नहीं मिलेंगे। फिर ये दादा नहीं मिलेंगे!

प्रश्नकर्ता : अब फिर से 'ये दादा नहीं मिलेंगे', तो इससे हमें क्या समझना है?

दादाश्री : फिर नहीं मिलेंगे अर्थात् अभी मिले हैं तो उनसे जितना सीखना हो उतना सीख लो। फिर कोई ऐसा एक भी आँकड़ा नहीं सिखाएगा, किसे इतनी फुरसत होगी? कौन ऐसा तप करवाने वाला होगा?

हम तप की ये बातें बहुत नहीं करते। इंसान का सामर्थ्य नहीं है। नहीं तो फिर ऐसे ही कभी-कभी कह देते हैं, तब। मनुष्य का क्या सामर्थ्य है? यह तो सब्ज़ी बिगड़ जाने पर भी दिन भर किच-किच करता रहता है। समभाव से *निकाल* अर्थात् क्या? तप करना। उससे कितना ऐश्वर्य प्रकट होता है! एक बड़ा साम्राज्य मिल जाता है! जितना इस तरफ जाने देते हो, उतना ही साम्राज्य मिलता जाता है। और जाने क्या देना है इसमें? था ही नहीं आपका कुछ! अभी मर जाओगे टें करके तो वहाँ छोड़ आएँगे फटाफट, चार नारियल बाँधकर। कोई बाप भी नहीं पूछेगा। इसलिए काम निकाल लेना। इस देह से काम निकालने की जगह मिली है तो यह काम निकाल लो न! आपको नहीं निकालना है? तो खड़े होकर बोलो! जोश से बोलो न! ऐसे क्यों बोल रहे हो? निकालना है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : काम निकाल लेना है, दादा।

दादाश्री : हाँ। तो अब, काम निकाल लो। व्यर्थ में ऐंठकर मर जाएँ! कोई बाप भी देखने नहीं आएगा! अरे, देखने आने वाला देह को देखेगा, आत्मा को थोड़े ही देखेगा? बेवजह हाय हाय! अनंत जन्मों से भिखारीपन किया था न, हम सब ने अपनी दुनिया में! जिन्हें ज्ञान न हो उसे नहीं कह सकते, एक अक्षर भी नहीं कह सकते। उनके लिए तो वही सर्वस्व है। यह तो जिन्हें ज्ञान है, उन्हीं से कह सकते हैं और वे ही तप कर सकते हैं और कोई नहीं कर सकता न!

तप की बात आज ही निकली है न, तो इस तप को पकड़ लो एक बार। तप का पुरुषार्थ करने लगो। महावीर भगवान ने इस तप के बारे में बताया है।

'खुद' के प्रति पक्षपात से स्वसत्ता पर आवरण

अभी तो खुद को अपने आप के प्रति पक्षपात है, पूरा ही पक्षपात है। खुद के प्रति पक्षपात नहीं रहे तो खुद की भूल पता चलेगी! पक्षपात समझ में आया? अब 'मैं चंदूभाई हूँ' ऐसा भान तो नहीं रहता है, लेकिन जब कर्म के उदय आते

हैं तब 'खुद' उदय स्वरूप हो जाता है! और उदय स्वरूप हुआ कि जागृति पर आवरण आ जाता है और खुद की भूल दिखाई नहीं देती। लेकिन सत्संग में आते रहने से वह भूमिका कमज़ोर होती जाती है और उपयोग रहने लगता है। सत्संग कम होगा तो उपयोग आवरित होता रहेगा।

घर में अगर चोर घुस जाए न, तो भीतर आत्मा है तो तुरंत ही समझ में आ सकता है ऐसा है। लेकिन समझ में क्यों नहीं आता? 'अपने यहाँ तो ऐसा कुछ नहीं है' ऐसा पक्षपात है, इसलिए उस तरफ का आवरण है और इसीलिए यह सब जानने नहीं देता। वर्ना तुरंत समझ में आ जाए।

'किसकी अँगूठी अच्छी है?' पूछेंगे तो तुरंत उँगली ऊँची करेगा। क्योंकि ऐसा पक्षपात है कि 'खुद की अँगूठी अच्छी है!'

इस तरह से खुद के प्रति खुद को पक्षपात है, इसलिए मूर्च्छित किए बिना नहीं रहता। उसका खुद को पता ही नहीं चलने देता न! 'मैं चंदूभाई हूँ' उसका भान तो हमने तोड़ दिया है, और दिया हुआ आत्मा भी खुद के पास रहता है लेकिन जब उदय के चक्कर घेर लेते हैं तब पता नहीं चलता कि 'मेरी क्या भूल हो रही है? कहाँ भूल हो रही है?!'

निरा पूरा भूल का ही तंत्र है न! उसी वजह से तो खुद की सत्ता आवृत पड़ी हुई है। आत्मा तो दिया है लेकिन सत्ता पूरी ही आवृत होकर पड़ी हुई है! और उस वजह से वचनबल व मनोबल भी नहीं खिल पाता। वर्ना वचनबल तो कैसा खिल जाए! अभी तो विषय पर पक्षपात है, कपट पर पक्षपात है, अंहकार पर पक्षपात है। इसलिए उपयोग जागृति रखो, सत्संग का ज़ोर रखो, तो ये सभी व्यवहार की भूलें दिखाई देंगी और हर तरफ उपयोग रहेगा। सत्संग में नहीं आएँगे तो क्या होगा? उपयोग रुक जाएगा। उसका क्या कारण है? पक्षपात! और वह खुद को भी पता नहीं चल पाता।

निष्पक्षपाती होने पर दिखाई देते हैं निजदोष

'स्वरूपज्ञान' के बिना तो भूल दिखाई नहीं देती। क्योंकि 'मैं ही चंदूभाई हूँ और मुझ में कोई दोष नहीं है, मैं तो बिल्कुल समझदार हूँ,' ऐसा रहता है और 'स्वरूपज्ञान' की प्राप्ति के बाद आप निष्पक्षपाती हो गए हो। मन-वचन-काया पर आपको पक्षपात नहीं रहा। इसलिए खुद की भूलें, आपको खुद को दिखती हैं। जिसे खुद की भूल पता चलेगी, जिसे प्रतिक्षण अपनी भूल दिखाई देगी, जहाँ-जहाँ हो, वहाँ दिखे, जहाँ नहीं हो वहाँ नहीं दिखे तो वह खुद 'परमात्मा स्वरूप' बन गया! 'वीर भगवान' बन गया!!! 'यह' ज्ञान प्राप्त करने के बाद खुद निष्पक्षपाती हो गया है, क्योंकि 'मैं चंदूभाई नहीं, मैं शुद्धात्मा हूँ' यह समझने के बाद ही निष्पक्षपाती हो पाते हैं। किसी का ज़रा सा भी दोष दिखाई न दे और खुद के सभी दोष दिखाई दें, तभी कहा जाएगा कि खुद का कार्य पूरा हुआ। पहले तो, 'मैं ही हूँ', ऐसा रहता था, इसलिए निष्पक्षपाती नहीं हुए थे। अब निष्पक्षपाती हुए इसलिए खुद के सभी दोष दिखने शुरू हो गए और उपयोग अंदर की तरफ ही रहता है, इसलिए दूसरों के दोष नहीं दिखाई देते! खुद के दोष दिखने देने लगें, यानी कि 'यह ज्ञान' परिणमित होना शुरू हो गया है। खुद के दोष दिखाई देने लगे इसलिए दूसरों के दोष दिखाई देते नहीं हैं। इस निर्दोष जगत् में जहाँ कोई दोषित है ही नहीं, वहाँ किसे दोष दें? जब तक दोष है, तब तक वह दोष अहंकार भाग है, और जब तक वह भाग धुलेगा नहीं, तब तक सारे दोष निकलेंगे नहीं और तब तक अहंकार निर्मूल नहीं होगा। अहंकार के निर्मूल होने तक दोष धोने हैं।

यदि अज्ञानी से हम ऐसा कहें, 'ऐसा दोष क्यों कर रहे हो?,' तो बल्कि कहेगा कि, 'वह तो ऐसा है कि यह लड़का सीधा नहीं रहता।' यदि खुद का दोष समझ में नहीं आए और औरों के ही दोष मालूम पड़ें तो, वह अज्ञानी

की निशानी है। वह निरंतर बंधन में आता रहता है और उसकी मार खाता रहता है। जबकि ज्ञानी की निशानी क्या है? ज्ञानी की कृपा कौन प्राप्त कर गया? जिसे तुरंत ही खुद के दोष दिखाई दें, जिसे ऐसी जागृति है और जिसे निरंतर यही भाव रहता है कि इनसे किस प्रकार से छूटूँ।

जो दोष को स्वीकार करे, वह सिन्सियर

प्रश्नकर्ता : हाँ, समझ में आया। यदि दोष हैं और कोई दोष बताए तो जो उस दोष को स्वीकार करके नम्र हो जाए, वह सिन्सियर है। अर्थात् हर समय, जब कभी भी, कहीं भी दोष हो तब अगर आप उसे स्वीकार कर लो तो क्या ऐसा कहा जाएगा कि आप पूर्ण रूप से सिन्सियर हो? अगर एक बार भी दोष का बचाव किया तो सिन्सियर नहीं हो?

दादाश्री : तो नहीं।

प्रश्नकर्ता : अतः खुद के बारे में ही ऐसा बता देना है कि, 'यह दोष है मुझमें', खुद का ही बता देना है।

दादाश्री : खुद इन्सिन्सियर है यदि ऐसा मानेगी तो आगे बढ़ पाएगी। मंगली का बचाव किया है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, किया है न!

दादाश्री : उस समय आप शुद्धात्मा नहीं रहे। यदि आप मंगली का बचाव कर रही हो तो आप शुद्धात्मा नहीं हो।

प्रश्नकर्ता : तो क्या मंगली का बिल्कुल भी बचाव नहीं करना है?

दादाश्री : नहीं! वर्ना आप शुद्धात्मा नहीं हो। फिर मेरे कहने पर आप कहती हो, 'मैं शुद्धात्मा हूँ।' वह आप कपट करती हो न? कपट नहीं करतीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, हाँ।

दादाश्री : मुझ से कहती हो 'मैं शुद्धात्मा हूँ' और आप मंगली नहीं हो, उसके बावजूद उसी में (मंगली में) रहना चाहती हो?

प्रश्नकर्ता : अब, अगर मंगली में नहीं रहना चाहूँ तो किस प्रकार से कहना है।

दादाश्री : आप उसी में रहना चाहती हो। वर्ना तुरंत ही उसका विरोध करतीं। उससे ऐसा कह सकती हो, 'मंगली अभी भी आप ऐसा करती हो?'

प्रश्नकर्ता : हाँ! मतलब मंगली से ऐसा कहना है कि, 'आप ऐसा सब कर रही हो तो फिर आप शुद्धात्मा कैसे हुई?'

दादाश्री : नहीं! कहना, 'मैं शुद्धात्मा बन चुका हूँ लेकिन आप शुद्धात्मा नहीं बनी हो इसलिए आप ऐसा नहीं बोल सकतीं'। आप तो कपट करती हो। जैसा दादा ने कहा है मैं वैसा शुद्धात्मा बन चुका हूँ लेकिन आप कपट करके मुझे मैला कर रही हो।

प्रश्नकर्ता : हाँ! तो मंगली से ऐसा कहना है?

दादाश्री : हाँ! कहना कि 'भाई, मुझसे ऐसी भूल हो रही थी, अब आपकी और मेरी नहीं बनेगी। अनुकूल नहीं आएगा,' आप सुधरो या बिगड़ो हमें कुछ भी नहीं कहना है। आपका बचाव नहीं करना है। हम तो मुँह पर कह देंगे कि 'आप ऐसा गलत करती हो।' बचाव क्यों करती हो? कुछ समझ में आया या नहीं?

मंगली का रक्षण करके देती हो दग़ा

प्रश्नकर्ता : 'मैं शुद्धात्मा हूँ, मैं शुद्धात्मा हूँ' करके विधियाँ करवाईं और रही मंगली में। यह कैसा और कितना दोष किया? कितना बड़ा नुकसान उठाया?

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : हमेशा विधियाँ करवाईं, हमेशा विधियाँ करवाईं कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ।'

दादाश्री : उस शुद्धात्मा की तरफ तो नहीं चले। *उपराणा* किसी और का, मंगली का लिया।

प्रश्नकर्ता : यानी कि दादा, यदि मैं ऐसा कहूँ कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ' तो मुझे शुद्धात्मा का ही रक्षण करना चाहिए।

दादाश्री : हाँ, अब सही है।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि मैं शुद्धात्मा हूँ और मंगली का रक्षण करती हूँ तब तो मैं कहीं की भी नहीं रही, वह कपट है।

दादाश्री : यही सब कहना है, कि हर समय ऐसा बोलती हो लेकिन मुझसे दग़ा क्यों करती हो?

प्रश्नकर्ता : हाँ, और यदि 'मैं शुद्धात्मा हूँ', तो जब पाँच आज्ञा का पालन करूँगी तभी उसका रक्षण होगा, शुद्धात्मा का।

दादाश्री : तभी होगा। तभी उसे सिन्सियर कहा जाएगा।

प्रश्नकर्ता : अब ठीक से समझ में आ गया कि मैं जो बोलती हूँ, उसी का मुझे रक्षण करना है। यदि मुझे दादा ने शुद्धात्मा बनाया तो मुझे शुद्धात्मा का ही रक्षण करना है। यदि मैं मंगली का रक्षण करूँगी तो मैं खुद को ही दग़ा दे रही हूँ और दादा को भी दग़ा दे रही हूँ।

दादाश्री : हाँ। मेरे लिए तो वही सिन्सियरिटी है कि आप पाँच आज्ञा का पालन करो। इतना ही कहना चाहते हैं।

जो खुद के ही पक्ष के प्रति सिन्सियर नहीं है, वह दूसरों के पक्ष के लिए क्या करेगा!

स्वरूप के लक्ष के अलावा कुछ नहीं चाहिए

अब, हमें ज्ञान के अलावा कुछ भी नहीं चाहिए और चंदू का जो सारा माल है, वह पौद्गलिक है। चंदू के व्यवस्थित में चाहे जो भी है, वह भले ही हो। हमें कुछ नहीं चाहिए। इस संसार की कोई भी चीज़ मुझे नहीं चाहिए। लेकिन मुझे यानी किसे, ऐसा तय करके बोलना चाहिए। वह 'मैं शुद्धात्मा हूँ' और चंदूभाई को जो चाहिए वह भले हो, मुझे उसमें हर्ज नहीं। जो भी चीज़ चाहिए, वह चंदूभाई को चाहिए और फिर वह ज़्यादा होती भी नहीं न! जो व्यवस्थित में हो वह भले हो, न हो तो कुछ भी नहीं क्योंकि वह व्यवस्थित ही है, एक्ज़ेक्ट। उससे आपको कोई परेशानी नहीं है। चंदूभाई अंदर ही अंदर सोच सकते हैं, उसमें हर्ज नहीं है। लेकिन यदि ऐसा भाव होगा न, कि 'नहीं चाहिए', तो वह सिन्सियरिटी है, तो फिर कोई भी कर्म नहीं चिपक सकता। सुबह पाँच बार बोलो कि 'मुझे इस संसार की कोई भी चीज़ नहीं चाहिए।' मुझे यानी शुद्धात्मा को। 'मुझे कोई चीज़ नहीं चाहिए,' पाँच बार ऐसा बोलकर जो उसके प्रति सिन्सियर रहेगा, उसे कोई भी कर्म नहीं बंधेगा। चाहे अंदर कितनी भी गलतियाँ हो, फिर भी कोई कर्म नहीं बंधेगा उसकी हम गारन्टी देते हैं।

यदि आप खुद के प्रति सिन्सियर रहोगे तो कोई परेशानी नहीं होगी, ऐसा यह विज्ञान है! केवलज्ञान स्वरूपी विज्ञान है। यदि आप सिन्सियर रहोगे तो फिर आपको कुछ भी स्पर्श नहीं करेगा। अब, इसमें कुछ भी कठिनाई नहीं है। हर दिन सुबह पाँच बार बोलकर सिन्सियर रहना है।

अगर इस ज्ञान में बारह महीने तक सिन्सियर रहोगे तो सारी कमज़ोरियाँ चली जाएँगी। सिन्सियर अर्थात् जो किन्हीं भी संयोगों में, कभी भी अपने ध्येय से विरुद्ध न चले।

खुद के व्यापार में रहो सतर्क

प्रश्नकर्ता : महावीर भगवान ने तो गौतम स्वामी से कहा था, *'समयम् गोयम्, मा पमायये'*, यानी एक समय के लिए भी प्रमाद मत करना। इतना जोखिम वाला है?

दादाश्री : जोखिम है न! पराये में हस्तक्षेप करके आपने क्या कमाया? आपकी कमाई तो बंद हो गई न! खुद के व्यापार में ही सतर्क रहना है। लोभी हमेशा अपने निजी व्यापार में बहुत सतर्क रहता है, उसी तरह शुद्ध उपयोग का लोभ रखना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : खुद के उपयोग का?

दादाश्री : हाँ, लोभी अपने व्यापार में बहुत सतर्क रहता है, यह मैंने देखा है। यहाँ बैठा हुआ हो, फिर भी समय होने पर कुछ भी करके बहला-फुसलाकर निकल जाता है। बहुत पक्का होता है। मुझे भी बुरा नहीं लगता न! ऊपर से ऐसा कहता है कि, 'साहब, दिन भर कमर बहुत दर्द करती है', यों तरह-तरह का बोलता है। हम समझते हैं कि घर पर सोने गया होगा लेकिन काम पर गया होता है। अपने लोभ का रक्षण करने के लिए वह कुछ भी कर सकता है। उसी तरह इसके (आत्मा के) लोभ हेतु कुछ भी कर सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : उपयोग की वह एक्ज़ेक्टनेस किस तरह पकड़ में आ सकती है?

दादाश्री : जब मशीनरी रिपेयर करने जाना पड़े, तब तुझे मशीनरी के पार्ट्स याद आते हैं, उसका सब याद आता है। तो यों अंदर उपयोग चलता रहता है, जब उसका उपयोग उसमें से दूसरी जगह चला जाता है तब वह (मशीनरी वाला) सारा उपयोग बिगड़ जाता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन खुद को कैसे पता चलेगा कि एक्ज़ेक्ट उपयोग रहा? इसमें ऐसा क्या है?

दादाश्री : देखना है कि चित्त इधर-उधर नहीं हो। हमारा चित्त वैसे ही बैठा रहता है जैसे बीन के सामने साँप बैठा रहता है। उस तरह से रहना चाहिए। फिर उपयोग नहीं हटेगा।

जब संयोगों का दबाव आता है तब उपयोग चला जाता है। वापस कहीं का कहीं चला जाता है। तब फिर मन में ऐसा भी होता है कि अरे! यहाँ उपयोग चूक गए। उपयोग चूक जाता है, उसे भी फिर जानने वाला जानता है।

प्रश्नकर्ता : जानने वाला जानता है इसलिए फिर से संधान किया जा सकता है न?

दादाश्री : हं, वापस फिर से जॉइन्ट कर लेता है। उदयाधीन नाव मार्ग बदल देती है, लेकिन वापस फिर वह निर्धारित रास्ते पर ही ले जाता है। ऐसा कभी हो जाता है न? उदयाधीन घूम जाती है। यदि हवा इस ओर की हो न, तो दिशा बदल जाती है!

अब शुद्धात्मा का ध्येय नहीं चूक सकते

अत: जो कुछ भी मोक्षमार्ग में बाधक है, उसे छोड़ देना और आगे बढ़ो फिर से। वह ध्येय से परे कहलाता है न! खुद का ध्येय चूक नहीं जाए, कैसे भी कठिन परिस्थिति में भी खुद का ध्येय नहीं चूके ऐसा होना चाहिए।

आपका ध्येय अनुसार चलता है क्या कभी? उल्टा नहीं कुछ भी? यह तो सहज हो गया है। नहीं?

प्रश्नकर्ता : अंदर 'हैन्डल' मारते रहना पड़ता है।

दादाश्री : चलाते रहना पड़ता है? लेकिन क्या वे अंदर वाले मान जाते हैं? तुरंत ही?

प्रश्नकर्ता : तुरंत ही।

दादाश्री : तुरंत? देर ही नहीं? यह अच्छा है। जितना वे मान जाएँगे, उतना ही वह मुक्त होने की निशानी है। उतने ही हम उससे अलग

हैं, वह निशानी है उसकी क्योंकि खुद कोई रिश्वत नहीं लेता। रिश्वत लेगा तो वे बात नहीं मानेंगे। यदि 'खुद' उनसे रिश्वत खाता है तो वे आपकी बात नहीं मानेंगे फिर। 'खुद' स्वाद ले आता है, फिर 'अंदर वाले' नहीं मानते।

कड़वे-मीठे अहंकार के पद में से आपको निकलना है न? फिर उसमें पैर क्यों रखते हो? तय करने के बाद दोनों ओर पैर रखने चाहिए क्या? नहीं रख सकते। रूठना कब होता है? जब किसी ने कड़वा परोस दिया तब। हम विधि करते समय बोलते हैं कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ' तो फिर शुद्धात्मा का रक्षण करना चाहिए या किसी और का? अहंकार को खुद ही नीरस करना बहुत कठिन कार्य है। इसलिए यदि कोई नीरस कर देता हो तो बहुत अच्छा है। उससे अहंकार नाटकीय रहेगा और अंदर का बहुत सुचारू रूप से चलेगा। यदि यह इतना फायदेमंद है तो अहंकार को नीरस करने हँसते मुख ही क्यों नहीं पीएँ? अहंकार संपूर्ण नीरस हो जाए तो समझो आत्मा पूर्ण हो गया। इतना तय करो कि मुझे अहंकार नीरस करना है तो फिर वह नीरस होता ही रहेगा।

पाँच आज्ञा से आत्मा का रक्षण

हमारी आज्ञा में सिन्सियर रहना तो सब से बड़ा गुण कहा जाता है। हमारी आज्ञा से जो अबुध हो गया, वह हमारे जैसा ही हो जाता है न! लेकिन जब तक आज्ञा पालन करता है तब तक आज्ञा में बदलाव नहीं करना चाहिए। तो फिर कोई हर्ज नहीं। यों तो यहाँ पर 'मैं शुद्धात्मा हूँ, मैं शुद्धात्मा हूँ' बोलते हो और जब झंझट होती है तब तू चंदू का बचाव करता है। तो वास्तव में तू क्या है?

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा।

दादाश्री : और बचाव किसका करता है?

प्रश्नकर्ता : चंदू का। चंदू का पक्ष लिया।

दादाश्री : समझ में आया, बचाव करता है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : कोई तुझे सात बार गाड़ी में बैठाए और उतारे, उस समय तेरा मुँह बासी कढ़ी जैसा हो जाता है! सावधान तो रहना पड़ेगा न? फिर हम क्या करते है? सावधान करते हैं। भाई जागो, जागो। बिवेयर! बिवेयर!

प्रश्नकर्ता : ज़रूर दादा, यह सब समझने की बहुत ही ज़रूरत है।

दादाश्री : एक भिखारी को राजा बना दिया जाए और गद्दी पर बैठने के बाद वह यदि ऐसा कहे कि, 'मैं भिखारी हूँ', तो ऐसा कहना ठीक होगा क्या? 'शुद्धात्मा' का पद पाने के बाद हमें अन्य कुछ भी नहीं रहना चाहिए। उसके लिए तो अहंकार धुलवाना पड़ेगा। कठोर परिश्रम करने का निश्चय करने से धुलेगा ही।

'मैं शुद्धात्मा हूँ' बोलते तो हो, तो फिर उसी पद में रहना है न?

ऐसा पद शास्त्रों में नहीं आया है तो, वह पद कैसे प्राप्त हो सकता है? यह जो पद आपको मिला है, वह अद्भुत है। इसलिए इसे संभालना, क्योंकि ऐसा पद दुनिया में कहीं भी नहीं हुआ है!

अरे, यह जो पद आपको मिला है न, उसके बारे में जैनों के, वैष्णवों के, सभी साधुओं को बताओगे न तो वे कहेंगे 'ऐसा पद हो ही नहीं सकता।' ऐसा तो सतयुग में भी नहीं था आपके पद की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता, इतना उच्च, गज़ब का पद है।

करोड़ों जन्मों में भी जो वस्तु प्राप्त नहीं हो सकती, वह आपको सहज रूप से प्राप्त हो गई है। अत: अब उसका रक्षण करना।

-जय सच्चिदानंद

दादाई जगकल्याण मिशन - सत्संग हाइलाईट्स

4 से 7 अक्तूबर : पूज्यश्री की गल्फ व अफ्रीका सत्संग यात्रा की शुरुआत में अल-एइन शहर के मिडल ईस्ट में महात्मों के लिए चार दिवसीय रिट्रीट (शिविर) से हुई। यु.ए.ई के महात्माओं द्वारा भव्य रूप से पूज्यश्री का स्वागत मलियाली, मराठी, गुजराती, मारवाड़ी और पंजाबी स्टाइल से किया। इस रिट्रीट में भाग लेने भारत से 100 और मिडल इस्ट से 125 महात्मा आये थे। दूसरे और तीसरे दिन पूज्यश्री के सत्संग आप्तवाणी-1, दादावाणी जून-2019 पर और जनरल प्रश्नोत्तरी सत्संग भी हुए। रात के सेशन में YMHT और MMHT ग्रुप द्वारा कल्चरल एक्टिविटी के रूप में ड्रामा प्रस्तुत किया गया। अंतिम दिन पूज्यश्री के दर्शन के कार्यक्रम के बाद सभी महात्मा पूज्यश्री के साथ सफारी डेज़र्ट में गए थे। वहाँ पर गरबा और सत्संग के बाद पूज्यश्री के साथ डिनर किया।

9 से 11 अक्तूबर : दुबई सिटी में आयोजित तीन दिवसीय सत्संग व ज्ञानविधि कार्यक्रम के बाद अबुधाबी, शारजाह, मस्कत, अल-एइन, सऊदी-अरब वगैरह से भी महात्मा व मुमुक्ष आए थे। दो दिवसीय प्रश्नोत्तरी सत्संग के बाद आयोजित ज्ञानविधि में 205 मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान की प्राप्ति की। सभी महात्मा पूज्यश्री के साथ प्रसिद्ध स्थल बुर्ज खलीफा देखने गए। उसके बाद पूज्यश्री दुबई से नैरोबी गए।

12 से 17 अक्तूबर : पूज्यश्री की केन्या सत्संग-यात्रा की शुरुआत नैरोबी शहर से हुई। एयरपोर्ट पर स्थानीय महात्माओं द्वारा अफ्रीकी गीत और नृत्य द्वारा उत्साहपूर्वक पूज्यश्री का स्वागत किया गया। नैरोबी में इस बार सत्संग व ज्ञानविधि का आयोजन नई जगह पर हुआ, जिसमें अलग-अलग बैकग्राउन्ड के मुमुक्षु आए थे। ज्ञानविधि में 120 मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। दूसरे दिन पूज्यश्री का ज्ञानविधि फॉलोअप सत्संग हुआ।

उसके बाद पूज्यश्री के साथ भारत से गए महात्मा और इस्ट अफ्रीका के 160 महात्मा तीन दिन सफारी के लिए सावो नेशनल पार्क गए। वहाँ पर उन्हें पूज्यश्री के नज़दीक रहने का, उनके साथ बातचीत करने का, उनकी दिनचर्या निहारने का और उनके साथ नैसर्गिक वातावरण में रहने का अमूल्य अवसर प्राप्त हुआ।

18 से 22 अक्तूबर : केन्या के मोम्बासा शहर में बहुत सालों के बाद पूज्यश्री की निश्रा में सत्संग व ज्ञानविधि के कार्यक्रम का आयोजन हुआ। पहले दिन के प्रश्नोत्तरी सत्संग के बाद आयोजित ज्ञानविधि में 50 मुमुक्षुओं ने आत्मज्ञान प्राप्त किया। उसके बाद तीन दिवसीय शिविर का आयोजन हुआ जिसमें केन्या के अलावा विदेशों के 250 महात्माओं ने भाग लिया। इस शिविर के दौरान GNC के 10 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य उत्सव मनाया गया और सेवार्थी सत्संग भी हुआ। एक दिन लाइव गरबा का आयोजन हुआ, जिसमें मुमुक्षुओं को भी आमंत्रित किया गया। महात्माओं को पूज्यश्री के साथ समुद्र किनारे वॉक और मोम्बासा स्ट्रीट पर फूड पिकनिक में भी आनंद आया। उसके अलावा आप्तवाणी-1 और दादावाणी जून-2017 पर पूज्यश्री के सत्संग हुए। पूज्यश्री के दर्शन के लिए 'दादा दरबार' का भी आयोजन हुआ।

27-28 अक्तूबर : त्रिमंदिर अडालज में दिवाली की रात को भक्ति के विशेष कार्यक्रम का आयोजन हुआ। मंदिर परिसर में भक्ति पदों की झड़ी में सभी महात्मा रसविभोर हो गए थे। इस शुभ अवसर पर पूज्यश्री ने भी पद गाया। नए वर्ष की नई सुबह त्रिमंदिर में अन्नकूट का प्रसाद भगवान को अर्पण किया गया। पूज्यश्री ने सभी भगवानों के दर्शन किए। उसके बाद दादा व नीरूमाँ को विविध प्रकार के व्यंजनों से भरी थाली प्रसाद के रूप में अर्पण की। पूज्यश्री ने महात्माओं पर चॉकलेट के प्रसाद की वर्षा करके उन्हें आनंद विभोर कर दिया। जायजेन्टिक हॉल में नए वर्ष के संदेश और विधि के पश्चात दिन भर पूज्यश्री के दर्शन का कार्यक्रम चला। उस दौरान महात्माओं ने प्रार्थना-विधियाँ, आरतियाँ, पदगुंजन और कीर्तन भक्ति की। पूज्यश्री के हाथों दादाश्री के आप्तसूत्रों वाले कैलेंडर व मंथली कैलेंडर का विमोचन किया गया।

6 से 13 नवम्बर : मुंबई के बोरीवली में परम पूज्य दादा भगवान के 112वें जन्म जयंती महोत्सव के शुभारंभ में, मुंबई की विशेषता दर्शाती हुई झाँकियों द्वारा पूज्यश्री का स्वागत किया गया। प्रथम सेशन के दौरान टॉपिक 'व्यवस्थित की समझ मुक्त रखे दखलंदाजी से' पर पूज्यश्री का विशेष सत्संग हुआ। शाम को हुए उद्घाटन समारोह के आरंभ में ज्ञानी पुरुष दादाश्री के जीवन में, मुंबई में हुई व्यवसाय से संबंधित घटनाओं में उनकी अद्भुत ज्ञान की समझ को दर्शाता हुआ नाटक प्रस्तुत किया गया। उसके बाद पूज्यश्री का प्रश्नोत्तरी सत्संग हुआ। पहले ही दिन रात को हुई भारी बरसात की वजह से महोत्सव प्रांगण में पानी भर गया था। परंतु सेवार्थी महात्माओं द्वारा की गई ज़बरदस्त मेहनत के परिणाम स्वरूप दो ही दिनों में पूरा महोत्सव प्रांगण फिर से तैयार हो गया। दूसरे दिन से त्रिमंदिर बोरीवली में तीन दिवसीय प्राणप्रतिष्ठा महोत्सव का शुभारंभ हुआ। प्रतिष्ठा के पहले दिन श्री शिव भगवान, पार्वती माता, हनुमान जी, गणपति जी, पद्मावती माँ, पद्मनाभ प्रभु, दादा व नीरू माँ और दादाश्री की फोटो की प्रतिष्ठा विधि हुई। उसके बाद पूजन व प्रक्षाल और आरती की गई। महोत्सव प्रांगण में पानी भर जाने की वजह से दो दिन सत्संग त्रिमंदिर में हुआ। प्रतिष्ठा के दूसरे दिन नौ तारीख को श्री कृष्ण भगवान, तिरूपति बालाजी, श्री नाथ जी, गरूड़ जी, तुलजा भवानी माँ, अंबे माता, भद्रकाली माँ, चक्रेश्वरी माँ, साँईबाबा की प्रतिमाओं की और दादाश्री की फोटो की प्रतिष्ठा विधि हुई। हर दिन अलग-अलग महात्मा मंदिर के सभागृह में बैठकर पूजन व आरती का लाभ लेते थे। 10 तारीख को तीर्थंकर भगवान श्री सीमंधर स्वामी, श्री ऋषभदेव, श्री अजीतनाथ, श्री पार्श्वनाथ और श्री महावीर भगवान और शासन रक्षक देवी-देवता श्री चांद्रायण यक्षदेव और श्री पांचागुली यश्रिणी देवी की प्रतिष्ठा विधि हुई। उसके बाद श्री सीमंधर स्वामी भगवान का प्रक्षाल व पूजन किया गया और मुकुट कुंडल, हार व बाजूबंध से भगवान का श्रृंगार किया गया। पूज्यश्री ने भगवान के मस्तक पर हीरे जड़ी बिंदी लगाई। उसके बाद मोतियों एवम् गुलाब की पंखुड़ियों का वर्षा करके स्वामी की आरती उतारी गई। उसके बाद चारों तीर्थंकरों के प्रक्षाल, पूजन और शासक रक्षक देवी-देवता का पूजन किया गया। दादाश्री के पूजन के बाद आरती की गई। तीनों दिन प्रतिष्ठा के समय महात्माओं द्वारा सामूहिक रूप से प्रार्थना व विधियाँ और असीम जय-जयकार किए गए। प्रतिष्ठा होने के बाद वहाँ उपस्थित महात्माओं भाव व उल्लास सहित देवी व देवताओं के दर्शन किए और ऐसे मंदिर की स्थापना के लिए बहुत धन्यता व्यक्त की उस दिन शाम को मंदिर में पूज्यश्री का सत्संग हुआ, उसका टॉपिक था 'बच्चों के पालक बनो, मालिक नहीं।'

कार्तिक महीने की चौदस, 11 तारीख को सुबह आठ बजे परम पूज्य दादा भगवान के 112वीं जन्म जयंती मनाने की शुरुआत हुई। नमस्कार विधि के बाद पूज्यश्री ने जन्म जयंती का संदेश दिया और जगत् कल्याण की भावना की सामायिक करवाई। दादा और सभी देवी-देवताओं की पूजा करने के बाद स्वामी तथा दादा का दीवो व आरती की गई। अगले साल 113 वीं जन्म जयंती उत्तर गुजरात के मेहसाणा शहर में मनाई जाने की घोषणा की गई। 11 तारीख को सुबह 10:30 बजे आप्तपुत्रों और आप्तपुत्रियों द्वारा दर्शनार्थियों के लिए मंदिर के द्वार खोले गए। उसके बाद त्रिमंदिर में पूजन, आरती व दर्शन किए गए।

जन्म जयंती के दिन पूज्यश्री के दर्शन का कार्यक्रम दिन भर चला, जिसका 14000 महात्माओं ने लाभ लिया। रात में दादाई भक्ति का कार्यक्रम हुआ। अंतिम दिन 12 तारीख को सुबह महात्माओं को बोनस के रूप में पूज्यश्री का सत्संग मिला। शाम को आयोजित ज्ञानविधि में 2650 मुमुक्षुओं ने अपने ज्ञान अनुभव बताए। शाम को मुंबई के सेवार्थियों ने पूज्यश्री के साथ ईन्फोमल टाइम बिताया और उनके साथ डिनर भी किया इस महोत्सव के दौरान पूज्यश्री के हाथों दादाई गरबा-4, प्रतिक्रमण ग्रंथ का और दस अन्य प्रादेशिक भाषाओं वाली पुस्तकों का विमोचन हुआ। सोविनियर के रूप से कैप या टी-शर्ट, टोपी बैग वगैरह बिक्री के लिए रखे गए थे। महोत्सव प्रांगण में चिल्ड्रन पार्क व थीम पार्क के चार मल्टीमीडिया शो का प्रदर्शन किया गया, जिसका बहुत से बच्चों और बड़ों ने लाभ लिया।

आत्मज्ञानी पूज्य नीरूमाँ और पूज्य दीपकभाई के आशीर्वाद प्राप्त आप्तपुत्रों के सत्संग कार्यक्रम

मालदा **दिनांक : 9 जनवरी** **समय :** शाम 5 से 7 **संपर्क :** 6296466474
स्थल : गाँव - मोस्तापुर, पोस्ट ऑफिस - बिरामपुर, जिल्ला - मालदा, पश्चिम बंगाल.

हल्द्वानी **दिनांक : 10 फरवरी** **समय :** दोपहर 2-30 से 4-30 **संपर्क :** 9412084002
स्थल : सील्वर स्टोन पब्लीक स्कूल, लालदंथ बायपास रोड, अंबानगर, कलाधुंगी रोड, हलद्वानी.

किच्छा **दिनांक : 11 फरवरी** **समय :** दोपहर 3 से 5 **संपर्क :** 9411594699
स्थल : वोर्ड नं. ८, पंत कोलोनी, किच्छा, उधम सिंह नगर.

आसनसोल	दि : 8 जनवरी	संपर्क : 6295591476	रुड़की	दि : 13 फरवरी	संपर्क : 9719415074
अकोला	दि : 1 फरवरी	संपर्क : 9422403002	देहरादून	दि : 14 फरवरी	संपर्क : 9012279556
अमरावती	दि : 2 फरवरी	संपर्क : 9403411471	इलाहाबाद	दि : 2 अप्रैल	संपर्क : 9935378914
नागपुर	दि : 3 फरवरी	संपर्क : 7249362999	मिर्जापुर	दि : 3 अप्रैल	संपर्क : 9415288161
चंद्रपुर	दि : 4 फरवरी	संपर्क : 9850345907	वाराणसी	दि : 4-6 अप्रैल	संपर्क : 9795228541
नांदेड	दि : 5-6 फरवरी	संपर्क : 8806665557	गोरखपुर	दि : 7 अप्रैल	संपर्क : 9935949099
हैदराबाद	दि : 8-9 फरवरी	संपर्क : 9885058771			

समय व स्थल के हेतु उपर दिए गए नंबर पर संपर्क करें

काशीपुर (उतराखंड) के महात्माओं के लिए आप्तपुत्रों के साथ विशेष शिविर

तारीख - **8 व 9 फरवरी 2020**

स्थलः चौहान सभा, कृपाल आश्रम के पास, गौतम नगर, काशीपुर, जनपद-उधम सिंह नगर (उतराखंड).
रजिस्ट्रेशन के लिए संपर्क : काशीपुर : 9457635398, 9456595435, **हल्द्वानी** : 9412084002, **किच्छा** : 9411594699

हरिद्वार (उतराखंड) के महात्माओं के लिए आप्तपुत्रों के साथ विशेष शिविर

तारीख - **15 व 16 फरवरी 2020**

स्थलः सियाराम जानकी वल्लभ सेवा सदन, दूधाधारी चौक, सांईबाबा वाली गल्ली, भूपत वाला, हरिद्वार.
रजिस्ट्रेशन के लिए संपर्क : हरिद्वार : 9719415074, **देहरादून** : 9012279556, **ऋषिकेश** : 8126189628

लाईव टेलिकास्ट देखिए अरिहंत चेनल पर

पारायण (विशेष सत्संग) आप्तवाणी - 14 भाग-1 पर गुजराती भाषा में

21 से 28 दिसम्बर हररोज सुबह 10 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 7

29 दिसम्बर सुबह 10 से 1 - **श्री सीमंधर स्वामी की प्रतिमा की प्राणप्रतिष्ठा विधि**

'दादावाणी' के वार्षिक सदस्यों के लिए सूचना

आपको आपकी दादावाणी पत्रिका की सदस्यता समाप्त हो रही है उसका पता कैसे चलेगा ? यदि आपको मिली इस महीने की दादावाणी पत्रिका के कवर पर लगे हुए लेबल पर ग्राहक नं. के बाद # हो तो यह आपकी अन्तिम दादावाणी पत्रिका है। उदा. DHIA12345#. दादावाणी पत्रिका रिन्यु कराने के लिए पेज नं. 3 पर दर्शाये गए मूल्य अनुसार मनी आर्डर या डिमान्ड ड्राफ्ट (पेयेबल अहमदाबाद) त्रिमंदिर अडालज के पते पर भेजें। साथ ही अपना नाम, पूरा पता (पिनकोड के साथ), फोन-मोबाइल नंबर, इ-मेल आदि आवश्यक जानकारी दें।

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 079-39830100, 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9328661188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा:** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687 **अन्य सेन्टरों के संपर्क : अहमदाबादः** (079) 27540408, **मुंबईः** 9323528901, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्लीः** 9810098564, **बैंगलूरः** 9590979099, **कोलकताः** 9830080820
यु.एस.ए.-केनेडाः +1 877-505-DADA (3232), **यु.के.:** +44 330-111-DADA (3232), **ऑस्ट्रेलियाः** +61 421127947

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

अडालज त्रिमंदिर

21-28 दिसम्बर - सुबह 10 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 7-30 - **आप्तवाणी-14 भाग-1** (पेज-162 से) **सत्संग**

29 दिसम्बर - सुबह 10 से 1 - **श्री सीमंधर स्वामी की प्रतिमाओं की प्राणप्रतिष्ठा**

सूचना : 1) शिविर में भाग लेने के लिए अपना रजिस्ट्रेशन करवाएँ। 2) हिन्दी भाषी महात्माओं के लिए रेडियो सेट के द्वारा हिन्दी में भाषांतर की सुविधा उपलब्ध होगी। आनेवाले महात्मा अपने साथ खुद का FM रेडियो और हेडफोन लेकर आए। 3) जिनके पास दादा भगवान परिवार का परमनन्ट आई-कार्ड (पहचानपत्र) है, वे आई-कार्ड अवश्य साथ लेकर आएँ।

4 जनवरी (शनि) शाम 4 से 7 - **सत्संग और 5 जनवरी** (रवि) सुबह 10 से 12 - **आप्तपुत्र सत्संग**

5 जनवरी (रवि) शाम 4 से 7-30 - **ज्ञानविधि**

19 मार्च (गुरु), **पूज्य नीरुमाँ की 14वी पुण्यतिथि पर विशेष कार्यक्रम**

20 मार्च (शुक्र) शाम 4 से 7 - **सत्संग** तथा **21 मार्च** (शनि) सुबह 10 से 12 - **आप्तपुत्र सत्संग**

21 मार्च (शनि) शाम 4 से 7-30 - **ज्ञानविधि**

कोलकाता

14 जनवरी (मंगल) शाम 5-30 से 8-30 - **सत्संग और 15 जनवरी** (बुध) शाम 5 से 8-30 - **ज्ञानविधि**

स्थल : विद्या मंदिर स्कूल, मोइरा स्ट्रीट, मिंटो पार्क के पास, कोलकाता. **संपर्क :** 9830131411, 8777084640

रजिस्ट्रेशन शुरू हो गया है, रजिस्ट्रेशन की अंतिम तारीख 31 दिसम्बर है.

सम्मेत शिखर

22 जनवरी (बुध) दोपहर - शाम 2-30 से 6 - **ज्ञानविधि**

स्थल : तमिलनाडु भवन के सामने, तलेटी, पोस्ट-शिखरजी (मधुबन), जिल्ला: गिरिडीह (झारखंड). **संपर्क :** 9924344456

रजिस्ट्रेशन शुरू हो गया है, रजिस्ट्रेशन की अंतिम तारीख 31 दिसम्बर है.

वडोदरा

31 जनवरी - 1 फरवरी (शुक्र-शनि) शाम 7 से 10 - **सत्संग और 2 फरवरी** (रवि) शाम 5-30 से 9 - **ज्ञानविधि**

3 फरवरी (सोम) शाम 7 से 10 - **आप्तपुत्र सत्संग**

स्थल : शालिन कोम्प्लेक्ष के सामने का मैदान, पाटीदार चौकडी, ईवा मोल के पास, मांजलपुर. **संपर्क :** 9825010984

दाहोद

4 फरवरी (मंगल) शाम 7-30 से 10-30 - **सत्संग और 5 फरवरी** (बुध) शाम 7 से 10-30 - **ज्ञानविधि**

6 फरवरी (गुरु) शाम 7-30 से 10-30 - **आप्तपुत्र सत्संग**

स्थल : टेणा प्लोट, आंबावाडी, गोविंदनगर, दाहोद. **संपर्क :** 9427013319

अडालज त्रिमंदिर में हिन्दी सत्संग शिविर - वर्ष 2020

20 से 24 मई - सत्संग शिविर

23 मई - ज्ञानविधि

सूचना : यह शिविर गुजराती भाषा नहीं जानने वाले मुमुक्षु-महात्माओं के लिए साल में एक बार हिन्दी में विशेष रूप से आयोजित की जाती है। शिविर रजिस्ट्रेशन संबंधित जानकारी मार्च 2020 के अंक में दी जाएगी। **रेल्वे टिकट रिझर्वेशन चार महिने पहले एडवान्स में होता है, इसलिए यह जानकारी आपको टिकट बुक करने हेतु दी जा रही है।**

दिसम्बर 2019
वर्ष-15 अंक-2
अखंड क्रमांक - 170

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2018-2020
Valid up to 31-12-2020
LPWP Licence No. PMG/HQ/036/2018-2020
Valid up to 31-12-2020
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

भूल को भूल समझो और उपराणां मत लो

हम अपनी भूल से बंधे हुए हैं। भूल मिट जाए तो परमात्मा ही हैं! जिसकी एक भी भूल नहीं रही, वह खुद ही परमात्मा है। यह भूल क्या कहती है? 'तू मुझे जान, मुझे पहचान।' यह तो ऐसा है कि भूल को खुद का अच्छा गुण मानते थे। भूल का स्वभाव कैसा है कि वह हम पर हावी हो जाती है। पर भूल को भूल समझों तो वह भाग जाती है। फिर खड़ी नहीं रहती, जाने लगती है। पर ये तो क्या करते हैं कि एक तो भूल को भूल नहीं समझते और ऊपर से उसका पक्ष लेते हैं। मतलब भूल को घर में ही भोजन कराते हैं। एक ही बार यदि अपनी भूल का पक्ष लिया जाए तो उस भूल की आयु बीस साल बढ़ जाती है! किसी भी भूल का पक्ष नहीं लेना चाहिए।

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner. Printed at Amba Offset, B - 99, GIDC, Sector - 25, Gandhinagar - 382025.